ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

चेत-वैशाख, संवत नानकशाही ५४०
अप्रैल **2008** वर्ष १ अंक ८

संपादक सिमरजीत सिंह *एम. ए., एम. एस. सी.*

सहायक संपादक सुरिंदर सिंह निमाणा *एम. ए. (हिंदी, पंजाबी), बीएड.*

चंदा

प्रति कापी	३ रुपये
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59
एक्सटेंशन नंबर { वितरण विभाग **303**, संपादकीय विभाग **304** }
फैक्स : 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय सूची

गुरबाणी विचार:

चेतु बसंतु भला . . .

चेतु बसंतु भला भवर सुहावड़े ॥
बन फूले मंझ बारि मै पिरु घरि बाहुड़ै ॥
पिरु घरि नही आवै धन किउ सुखु पावै बिरहि बिरोध तनु छीजै ॥
कोकिल अंबि सुहावी बोलै किउ दुखु अंकि सहीजै ॥
भवरु भवंता फूली डाली किउ जीवा मरु माए ॥
नानक चेति सहजि सुखु पावै जे हरि वरु घरि धन पाए ॥ *(पन्ना ११०७-०८)*

पहले पातशाह श्री गुरु नानक साहिब जी ने इस पावन बाणी में चैत्र मास का वर्णन करने से पूर्व चार पउड़ियों की रचना की है। इनमें विद्यमान रूहानी भावों तथा विचारों को विचाराधीन लाना आवश्यक महसूस होता है।

ੴ सतिगुर प्रसादि के मंगलाचरण उपरांत गुरु साहिब उस परमात्मा को संबोधन करते हुए प्रवचन करते हैं कि हे मालिक! जो भी सुख या दुख तू जीव को देता है (भाव मनुष्य मात्र सुखों ही की इच्छा न करता रहे। वह दुख को भी इंसानी जीवन का भाग समझे।) हे परमात्मा! सारी रचना जो दिखाई देती है सब तेरी ही तो है। तेरी निर्मल स्मृति के बिना मुझ निमाने जीव का क्या जीवन है? उस प्यारे के बिना अत्यंत ही कठिन स्थिति बनती है, संसार में जीव का कोई मित्र नहीं। इसलिए हे परमात्मा! आप ही मुझे गुरु जी ओर संमुख कर दो इसलिए कि सदीवी आनंद का स्रोत नाम-अमृत पी सकूं।

वह स्वामी आकार रहित होकर भी रचना में व्यापत हो रहा है जिसका अनुभव होने पर मन में उत्पन्न ख़्यालों के आधार पर अच्छे कर्म हो निपटते हैं। श्री गुरु नानक देव जी जीव-स्त्री का प्रतिनिधित्व करते हुए कथन करते हैं कि निमानी जीव-स्त्री तो हे स्वामी! आप जी का रास्ता निहार रही है। आप जी आत्मा की पुकार सुनकर अपने पावन दर्शन-दीदार बख़्शिश करो जी।

पपीहा 'प्रिउ प्रिउ' बोलता है; कोयल 'कू कू' की मीठी वाणी बोलती है। जो जीव-स्त्री परमात्मा के अंग-संग रहती हुई उसके नाम में रक्त हो जाती है, स्वामी को वही अच्छी लगती है। वही सोहाग्नि है। नौ घरों या नौ इंद्रियों को उसके नाम में टिकाकर वह ऊंची हो जाती है। उसके हृदय रूप घर में प्रियत्म का निवास हो जाता है। वह इस मनोस्थिति में स्वयं को 'मैं तेरी, मैं तेरी हूं' कहती हुई दिन-रात उसके रंग में रक्त रहती है। श्री गुरु नानक देव जी महाराज कथन करते हैं कि मेरा पपीहा रूप मन 'प्रियत्म प्रियत्म' ही पुकारता है। कोयल-आत्मा मीठी स्मृति में प्यार में भीगे बोल उच्चारण करती है कि मेरे रसीले प्रियत्म! मेरी विनती सुनो! आप जी मेरे मन और शरीर में प्रत्येक पल बसे रहिए! एक पल भी मैं आप जी को न भुलाऊं! भुलाना भी क्यों हुआ? मैं तो जीवित ही गुण गायन करने के कारण रह सकती हूं। मेरा तो अन्य कोई इस संसार पर आप जी के अतिरिक्त है ही नहीं। आपके बिना मैं रह ही कैसे सकती हूं? जब मैंने आप जी का सहारा चाहा है, जब से आप जी के पावन चरणों का मेरे हृदय में निवास हुआ है यह मेरा नश्वर शरीर भी जैसे पवित्र हो गया हो! गुरु जी कथन करते हैं कि ऐसी

व्यापक दृष्टि मिल जाने से मनुष्य सुख ढूंढ लेता है। गुरु के शब्द में चित्त जुड़ने के कारण मानवी मन को संतुष्टि मिल जाती है।

जिस जीव-स्त्री के हृदय में स्वामी के नाम-अमृत की सुहावनी धारा बहती है उसको वह सदीवी मित्र परमात्मा सहज भाव ही मिल जाता है। परमात्मा के साथ उसका मिलाप होने का सबब प्रभु-प्रेम उत्पन्न हो जाता है। गुणों को समझ एवं संचार हो जाने के कारण प्रभु-हुक्म में ही जीव-स्त्री के हृदय-घर में परमात्मा बसता है। अब जब वह हरेक पल ही उसको स्मर्ण करती है तो फिर उसको क्यों भुलाएगी? ऐसी मनोस्थिति में जीव-स्त्री घिरकर आये बादल को विनती करती है कि हे बादल! तू ऐसा बरस कि मेरे मन-तन में प्यारे का प्रेम सुखदायी हो निपटे! श्री गुरु नानक देव जी कथन करते हैं कि जिस घर में प्रभु की स्तुति की वर्षा होती है प्रभु वहां आ टिकता है।

गुरु जी फरमान करते हैं कि यह जो चैत्र का मास है यह बसंत ऋतु होने के कारण अच्छा लगता है। इस मास में बनस्पति फूलती-फलती है तथा इस ऊपर भंवरे मंडराते दिखाई देते हुए सुंदर लगते हैं। खुली जूह में वनस्पति का फलना-फूलना तभी अर्थपूर्ण होगा यदि मेरा प्रभु-पति भी मेरे हृदय में आ बसे। जिस जीव-स्त्री का प्रभु-पति हृदय-घर में बसता नहीं वह जीव-स्त्री क्यों सुखी होगी? भाव कदचित सुखी नहीं हो सकती। वह आत्मिक आनंद से रिक्त ही रहेगी। प्रभु-पति से बिछुड़ना उसके लिए घोर दुखदायक सिद्ध होता है और बिछुड़ने की स्थिति में उसका शरीर टूटता है। चैत्र के मास में बाहर का वातावरण तो सुहावना है, कोयल इस ऋतु में आम के पेड़ पर बैठ कर सुंदन बचन उच्चारण करती है जो कानों को सुनने में मीठे लगते हैं। फिर मेरा हृदय ऐसे सुंदर समय में प्रभु-पति की जुदाई का दुख क्यों सहन् करे? भाव यह जुदाई का दुख मेरे लिए असहनीय हुआ पड़ा है।

चैत्र के मास में फूलों की चाहत रखने वाला भंवरा फूलों से मालामाल हुई शाखा पर घूम-फिर रहा है। ऐसे सुहावने समय में मैं आत्मिक मृत्यु का दुख सहन् करती हुई क्यों जीऊं? भाव ऐसी आत्मिक मृत्यु का दुख असहनीय है। मनुष्य-जन्म का लाभ ले रही जीव-स्त्री को सतिगुरु जी दिशा बख़्शिश करते हुए फरमान करते हैं कि चैत्र के महीने में जीव-स्त्री को प्रभु-पति के मिलाप का सुख सहज-भाव में विचरण करते हुए, भाव मनुष्य-जन्म में गृहस्थ धर्म तथा निष्काम सेवा के परोपकारी कारज निभाते हुए नसीब हो सकता है यदि वह स्त्री प्रभु-पति को अपने हृदय के घर में से ही प्राप्त कर ले। दूसरे शब्दों मे उसको कठोर शारीरिक तप-साधना और कर्मकांड आदि में उलझने की कोई आवश्यकता नहीं।

पहले पातशाह द्वारा बख़्शिश किये उपरोक्त शब्द की दिशा में चलते हुए हमें भी चाहिए कि हम यह चैत्र मास का बसंत रूप अवसर शुभ गुणों के धारणी होकर सफल करने का उद्यम करें, उस प्रभु-पति को, गुरु-द्वारा बख़्शे सच्चे ज्ञान के प्रकाश में अज्ञानता तथा विषय-विकारों रूप अंधकार के घेरे से निकल कर, अपने हृदय में ढूंढ लें। कहीं ऐसा न हो कि यह प्रभु-पति के साथ मिलाप वाली ऋतु बिछोड़े की दुखदायक मानसिक स्थिति में ही व्यतीत हो जाए तथा हमें पछताना पड़े क्योंकि-

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥ गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥ मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ (पन्ना १२)

इन गरीब सिंघन को दयै पतिशाही . . .

खालसा पंथ की साजना अनेकों दृष्टियों से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का इंकलाबी कदम था जिन में से यहां मात्र एक दृष्टि से विचार की जा रही है। वह दृष्टि है खालसा पंथ की सृजना के द्वारा है व्यवहारिक रूप से तत्कालीन युग के जन-साधारण को बहुप्रकारी गुलामी से मुक्त कराना अथवा उसके चिरकाल से छीने जा रहे स्वतंत्रता के जन्मसिद्ध अधिकार को उसको लौटाना ताकि वह भी स्वतंत्रता की खुली फ़िज़ा में सांस ले सके।

साहिब-ए-कमाल दशमेश पिता ने तत्कालीन शासन-प्रबंध में जन-साधारण की काफी दयनीय दीन-दशा को बदलने हेतु अकाल पुरख परमात्मा के हुक्म व इच्छा के अनुरूप सिख समुदाय को खालसा संगठन में संगठित करके जन-साधारण के कल्याण और कल्याण से भी कई कदम आगे उसकी कायाकल्प करने की अपूर्व योजनाबंदी की और पूर्ण सफलता सहित उसे अमल व व्यवहार में लाकर श्री गुरु नानक देव जी के द्वारा सृजित 'सिख' को 'खालसा' के रूप में इस लोक में प्रकट अथवा साकार किया।

१६९९ ई की वैसाखी से पूर्व जन-साधारण की स्थिति का ऐतिहासक विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गुलामी के बंधन अत्यंत कठोर थे। सभी धर्मों से संबंधित उच्चवर्ग तो लगभग सभी स्वतंत्रताओं का मजा ले रहा था, उसका एक भाग तो रंग-रलियां मनाना ही अपनी जीवन-शैली बना चुका था लेकिन जन-साधारण अत्यंत कठिनाइयों में से गुजर रहा था। वह सायं-काल को दिन भर के जान तोड़ कर काम करने के बावजूद पेट भर रोटी और अन्य जरूरी आवश्यकताओं की पूर्ति करने को भी सक्षम न था। वास्तव में शासक-प्रशासक श्रेणी ही सभी संसाधनों पर कब्जा जमाये बैठी थी। यह भी जग जाहिर है कि किसी भी मानव समाज में निर्धनों का स्वाभिमान कायम रहना अत्यंत मुश्किल होता है। धनवान, निर्धनों को अपमानित करना अपना जन्म-सिद्ध अधिकार मानते चले आ रहे हैं। यदि हम यह कहें कि खालसा पंथ के प्रकट होने से पूर्व भारतीय जन-साधारण मनुष्यों के स्तर का नहीं बल्कि पशुओं के स्तर का जीवन-यापन कर रहा था तो इस में कोई अतिष्योक्ति नहीं।

ज्ञानी ज्ञान सिंघ द्वारा 'पंथ-प्रकाश' में लिखा इसकी पुष्टि करता है कि खालसा पंथ के प्रकट होने से पूर्व नानक नाम लेवा सिख भी अभी सही स्तर कर जीवन-यापन करने के सक्षम नहीं हो पाये थे। लिखित शब्द कहते हैं कि दशमेश पिता ऐसा सोच रहे थे कि

यदि 'गुरु' 'गरीब निवाज' के रूप में विश्व-ख्याति प्राप्त कर रहे हैं तो लघु जातियों को बढ़प्पन देना अनिवार्य है; जिन लोगों की जाति एवं कुल में कभी सरदारी हुई ही नहीं मैंने (गुरु ने) अब उनको सरदार बनाने हेतु दृढ़ संकल्प किया है। इन हीन्-दीन लोगों को सरदार बनाकर ही मैं गोबिंद सिंघ कहलवाऊंगा। मैं कीटों को राजन बना दूंगा। भाई रतन सिंघ भंगू ने गुरु महाराज के ऐसे संकल्पों के बारे में बताते हुए कुछ इस प्रकार लिखा है कि "हम हट्टी करने वालों, सब्जी बेचने वालों, गंवार कहलवाने वालों, अहीरों, गवारों, राजाओं की स्तुति करने वाले भट्टों, ब्राह्मणों, भिखारियों, लुबाणों, कुम्हारों, लोहारों और बढ़इयों— इन गरीब सिंघन को पातशाही दे देंगे ताकि वे हमारी गुरुआई स्मरण रखें।" और गुरु जी ने जो संकल्प लिये उनको खालसा साजना के ऐतिहासिक कारनामे को सरअंजाम देकर साकार कर दिखलाया। इतिहास साक्षी है कि खालसा जी ने जहां स्वयं मानसिक एवं सामाजिक रूप से स्वतंत्रता से जीवनयापन करना प्रारंभ किया वहां संपर्क में आये प्रत्येक मजबूर शख्स को भी मानसिक व सामाजिक रूप से आजाद करवाया। यदि कोई ब्राह्मण शरण में आ गया कि खालसा जी, मेरी नव-विवाहिता को फलां-फलां हाक्मि उठाकर ले गया है तो साहिबे-ऐ-कमाल गुरु जी द्वारा सृजत खालसा जी का खून खौला और उसने हाक्मि को उसके किये के लिए दंडित भी किया तथा मजबूर शख्स को उसकी नवविवाहता भी मुड़वाई। यह भी स्मर्ण रहे कि गुरु जी के काल में तथा काफी देर बाद के उत्तर काल में परिस्थितियां चाहे कितनी भी विकट क्यों न हुईं गुरु जी का साजा-निवाजा खालसा पंथ व्यक्तिगत और सामूहिक स्वतंत्रता का स्वाद स्वयं भी चखता रहा तथा जहां कहीं अवसर बना खालसा पंथ ने इसका स्वाद दूसरों को भी चखने का लाभ लेने में हर संभव सहायता दी। ■

कविता

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को भारती का प्रणाम

(लगभग एक सौ वर्ष पूर्व तमिल भाषा के प्रसिद्ध जनकवि सुब्रह्मण्य भारती ने यह कविता तमिल में लिखी थी, जिसका हिंदी भावानुवाद प्रस्तुत है।)

देशों में इक देश, नाम पंजाब है जिसका,
उस धरती की मैं भी, गाने लगा हूं गाथा।
उस धरती पर गुरु-शिरोमणि गोबिंद सिंघ ने,
जात मिटाकर अपने हाथों, सिंघ सजाये।
गुरु गोबिंद सिंघ कवि थे, ज्ञानी थे धर्मोद्धारक,
महाप्रतापी, विद्या-प्रेमी, जन-कल्याणक।
खड्ग उठाकर गुरु ने, भारत-गर्व बढ़ाया।
शीश उठाकर लोगों को, जीना सिखलाया।
'वाहिगुरु जी की फतह' कहा और फौजें बढ़ गईं।
छाती पर औरंगजेब की, जाकर चढ़ गईं।
धर्म का झंडा गुरु गोबिंद सिंघ ने लहराया।
झुककर नभ झंडे को, सहलाने आया।

-डॉ नरेश, १६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९

रहमतें बरसती रहें !

'गुरमति ज्ञान' का जनवरी अंक प्राप्त हो गया है। पत्रिका विविधता तथा सारपूर्ण सामग्री से ओत-प्रोत तो है ही साथ ही आप जी द्वारा लिखित सम्पादकीय "आओ, समस्त वनस्पति से प्यार करें . . ." में गुरबाणी संदर्भ देकर तथा काव्य पंक्तियों द्वारा वर्तमान में निज स्वार्थ में अंधे हुए मनुष्य की आंखें खोल कर, अन्दर और बाहर झांकने, आत्म-विश्लेषण कर प्रकृति से खिलवाड़ न करने की प्रेरणा देता है। वाहिगुरु के चरणों में अरदास है कि पत्रिका को चढ़ती कला में रखे। 'गुरमति ज्ञान' की सारी टीम को और बल बखशे ताकि वे अथक सेवा, लगन से हजारों पाठकों तक गुरबाणी के पावन संदेश पहुंचाने में सफल हों। 'गुरमति ज्ञान' पर वाहिगुरु की रहमतें हमेशा बरसती रहें!

-डॉ. मनजीत कौर,
२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-४

नैतिक धर्म की सीख से भरे लेख

नये कलेवर के साथ 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका प्राप्त हुई। सभी लेख ज्ञानवर्धक एवं नैतिक धर्म की सीख से भरे हैं। बस, लाभ उठाना चाहिये ज्ञान और भक्ति का। पत्रिका की छपाई और कागज को देखते हुये मूल्य बहुत कम है लेकिन आजकल के माहौल के हिसाब से ठीक ही है।

-डॉ. शैल वर्मा
सागर सदन, गांधी नगर,
बस्ती (उ. प्र.)-२७२००१

प्रदूषण तों खबरदार !

आप जी द्वारा लिखी सम्पादकीय पढ़के प्रसन्नता होई। इस लई प्रदूषण दे विरुद्ध स्वर्गवासी भक्त पूरन सिंघ जी (पिंगलवाड़ा) ने वी बहुत लिखिआ, मुफ्त वंडिआ ताकि जनता सावधान होवे। असीं वी रोज पढ़दे ते सुणदे हां। *"पवन गुरु पाणी पिता माता धरत' महत'* गुरु-जन ने लिख कर सावधान कराइआ लेकिन इस प्रदूषण तों खबरदार करन लई गुरबाणी विच लिखिआ असीं सिर्फ तोते दी तरां पढ़दे ते सुणदे हां। आप जी दा आभारी होवांगा जे इस तुक नूं विस्तार नाल दो। इह वी आस करदा हां कि लेखां राहीं आम जनता नूं जगाण दा निरंतर यतन करोगे।

-ईशरदास,
८१६/४०-A, चंडीगढ़।

काबिले-तारीफ पत्रिका

'गुरमति ज्ञान' सही रूप में काबिले-तारीफ पत्रिका है। हम हिन्दी प्रदेश में रहने वालों को यह पत्रिका सरलता के साथ गुरबाणी का ज्ञान करवा रही है। साथ ही आपके द्वारा किये जाने वाला प्रयास भी सराहनीय है। इतनी कम कीमत में घर-घर पत्रिका पहुंचाना कोई आसान बात नहीं। मैं इस पत्रिका का आजीवन सदस्य हूं और अपने मित्रों की भी सदस्य बनने हेतु प्रेरित करता हूं।

-स. परविंदर सिंघ, ६२, लाला
लाजपतराय कालोनी,
रायसेन रोड, भोपाल (म. प्र.)

■

श्री अकाल तख़्त साहिब सर्वस्वीकृत एवं सर्वोच्य है

अमृतसर : श्री अकाल तख्त साहिब सिख जगत की सर्वोच्य तथा सिरमौर संस्था है। समस्त सिख जगत यहां से जारी आदेश, संदेश एवं गुरमतों को अलाही हुक्म जानकर सिर झुकाता है। आए दिन इस पावन तख्त की सर्वोच्चता पर किंतु-परंतु किये जाने के समाचारों का रुझान बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण बात है। ऐसे गुमराहकुंन समाचारों से गुरेज करना चाहिए। इन विचारों का प्रगटावा शिरोमणि कमेटी के कार्यकारिणी सदस्य स. राजिंदर सिंघ मेहता एवं स. गुरबचन सिंघ करमूंवाला, सदस्य शिरोमणि कमेटी स. जसविंदर सिंघ एडवोकेट, स. सविंदर सिंघ दोबलिया तथा स. खुशविंदर सिंघ ने यहां से जारी एक सांझे प्रेस रिलीज में किया।

उन्होंने कहा कि मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की तरफ से स्थापित श्री अकाल तख्त साहिब सिखी सिद्धांतों, मर्यादा तथा परंपराओं की तरजमानी करने वाला सर्वस्वीकृत तथा सर्वोच्य पावन स्थान है और यहां से जारी हर हुक्मनामे, आदेश, संदेश तथा गुरमते को संसार भर में बसे सिख अलाही फरमान समझ इसको अपनाते हुए गर्व महसूस करते हैं। उन्होंने कहा कि किसी षड़यंत्रवश सिख पंथ की एकता, एकसुरता तथा पंथक शक्ति को खोरा लगाने वाले ऐसे बयान से संगतों को गुमराह नहीं होना चाहिए।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की आधुनिक ढंग से छपाई के लिए नयी प्रिंटिंग मशीनरी खरीदी जाएगी- जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष शिरोमणि गु: प्र: कमेटी ने बताया कि कार्यकारिणी कमेटी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की छपाई आधुनिक ढंग से कराने हेतु नई प्रिंटिंग मशीनरी खरीदने के लिए ७ करोड़ रुपये की स्वीकृति दी है। यह मशीनरी दुनिया भर के नामवर निर्माताओं से टेंडर लेने के उपरांत खरीद की जाएगी।

कैंसर मैनेजमेंट और कंट्रोल विषय पर सेमीनार

अमृतसर : श्री गुरु रामदास इंस्टीचियूट ऑफ़ मेडीकल साइंसज़ एण्ड रीसर्च, वल्ला, श्री अमृतसर में कैंसर मैनेजमेंट और कंट्रोल विषय पर करवाये गए सेमीनार में प्रसिद्ध विशेषज्ञ डॉक्टर दविंदर सिंघ ने कहा कि कैंसर एक भयानक रोग है। इस रोग की रोकथाम और उपचार के लिए हमें विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है। उन्होंने कैंसर के प्रति विस्तृत जानकारी देते हुए बताया कि भारत में कैंसर के रोग और विशेष रूप से पंजाब में इस भयानक रोग में निरंतर वृद्धि हो रही है। उन्होंने आगे बताया कि तंबाकू के सेवन और मदिरापान से पंजाब में रहने वाले लोगों में कैंसर रोग बहुत बढ़ रहा है। इसके अतिरिक्त कीटनाषक दवाइयों के अनचाहे प्रयोग और खादों के अनावश्यक प्रयोग से भी कैंसर रोगों में वृद्धि हो रही है। उन्होंने स्त्रियों में छाती के कैंसर रोगों से बचाव के ढंग-तरीके भी बताये।

उन्होंने बताया कि किसी मरीज में कैंसर की आशंका पड़ने पर हमें अपने स्वर पर उपचार करने की बजाय कैंसर के विशेषज्ञ डॉक्टरों के पास मरीज को भेजना चाहिए इसलिए कि उसका पहली स्टेज पर पता लगने पर ही उपचार करना संभव हो सके। उन्होंने आगे बताया कि हम सभी को जन-साधारण में यह जागरूकता उत्पन्न करनी चाहिए इसलिए कि वे समय-समय डॉक्टरी जांच करवाते रहें ताकि प्रथम स्टेज पर ज्ञात हो जाने से ही उपचार किया जा सके।

इस अवसर पर डॉक्टर बलजीत सिंघ प्रोफेसर और मुखिया, नेत्र रोग विभाग ने बताया कि पंजाब एक कृषि प्रधान प्रांत है। इसमें गेहूं, चावल की फसल और कपास पर भी कीटनाषक और बूटीनाषक दवाइयों के अनचाहे प्रयोग से किसानों और श्रमिकों में कैंसर रोग घर कर गया है। इससे बचने के लिए हमें ऑरगेनिक कृषि करनी चाहिए और कृषि के प्राचीन ढंग-तरीके उपयोग में लाने चाहिए और रासायनिक खादों की बजाय देसी खाद का उपयोग करना चाहिए। उन्होंने कहा कि जो दवाइयां उन्नत देशों में सदा के लिए बंद कर दी गई हैं, उनका प्रयोग भारत में भी बंद कर देना चाहिए।

इस विषय पर बोलते हुए स. अवतार सिंघ, अध्यक्ष शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने कहा कि हिंदोस्तान में बढ़ रहे कैंसर रोग की रोकथाम के लिए समूह धार्मिक और सामाजिक संगठनों को, लोगों में जागरूकता उत्पन्न करने के लिए आगे आना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, इस अधीन चल रही संस्थाओं, अस्पतालों, डिसपेंसरियों और विशेष रूप से गुरु रामदास रोटरी कैंसर हस्पताल के द्वारा जागरूकता उत्पन्न करने के लिए पहलकदमी करेगी और कैंसर मरीजों के उपचार और सहायता के लिए फंडों की कमी नहीं आने दी जाएगी।

सेमीनार के अंत में संस्था के निर्देशक प्रिंसीपल गीता शर्मा ने डॉ. दविंदर सिंघ का कैंसर प्रति जानकारी देने के लिए धन्यवाद किया।

माछीवाड़ा, होशियारपुर, फिरोजपुर तथा जालंधर में पब्लिक स्कूल खोले जाएंगे

अमृतसर: जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने बताया कि कार्यकारिणी कमेटी के एक निर्णय के अनुसार सिख शहीद भाई जीवन सिंघ जी की स्मृति में माछीवाड़ा में एक पब्लिक स्कूल खोला जाएगा। ऐसे ही एक अन्य पब्लिक स्कूल होशियारपुर में सिख शहीद भाई संगत सिंघ की स्मृति में खोला जाएगा। फिरोजपुर में एक पब्लिक स्कूल भाई धीर सिंघ जी और भाई बीर सिंघ जी की स्मृति में खोला जाएगा और जालंधर में एक पब्लिक स्कूल भक्त रविदास जी की स्मृति में खोलने का कार्यकारिणी कमेटी द्वारा निर्णय लिया गया है। एकत्रता में शिरोमणि कमेटी के वरिष्ठ उपाध्यक्ष स. रघुजीत सिंघ करनाल, महासचिव स. सुखदेव सिंघ भौर, कार्यकारिणी के सदस्य स. राजिंदर सिंघ मेहता, स. संतोख सिंघ समरा, बाबा टेक सिंघ धनौला, स. दयाल सिंघ कोलियांवाली, स. गुरबचन सिंघ करमूंवाला, स. सुरजीत सिंघ गढ़ी, बीबी भजन कौर डोगरांवाला, स. निर्मल सिंघ जौलां कलां, स. करनैल सिंघ पंजोली और स. गुरविंदर सिंघ शामपुरा शामिल हुए। इस मीटिंग में शिरोमणि कमेटी के सचिव स. हरबेअंत सिंघ तथा स. दलमेघ सिंघ के अलावा अन्य पदाधिकारी भी शामिल थे। ■

श्री गुरु अंगद देव जी : नामावलि विश्लेषण

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जन्मगत नाम : सामान्य प्रयोग : माता दया कौर जी तथा पिता फेरूमल जी ने अपने घर ५ वैशाख, संवत् १५६१ विक्रमी को जन्मे अपने लाडले पुत्र का नाम "लहणा" रखा। यही भाई लहणा जी प्रथम सिख गुरु श्री गुरु नानक देव जी का शिष्यत्व ग्रहण करने तथा सेवा-सुमिरन के उपरांत गुरु अंगद देव जी के नाम से विख्यात हुए। इनके जन्मगत नाम "लहणा" का उल्लेख श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अनेक स्थलों पर हुआ है। रामकली राग में निबद्ध 'वार' में सत्ता और बलवंड नामक रबाबियों ने आपका गुणगान करते समय आपके नाम (लहणे = लहणा) का उपयोग इस प्रकार किया है:

लहणे धरिओनु छतु सिरि करि सिफती अंम्रितु पीवदै ॥
मति गुर आतम देव दी खड़गि जोरि पराकुइ जीअ दै ॥
गुरि चेले रहरासि कीई नानकि सलामति थीवदै ॥
सहि टिका दितोसु जविदै ॥ (पन्ना ९६६)

कल सहार नामक भट्ट ने भी गुरु साहिब के मूल नामवाचक शब्द "लहणा" का उल्लेख इस प्रकार किया है:

-सोई पुरखु धंनु करता कारण करतारु करण समरथो ॥
सतिगुरू धंनु नानकु मसतकि तुम धरिओ जिनि हथो ॥ . . .
कहु कीरति कल सहार सपत दीप मझार लहणा जगत्र गुरु परसि मुरारि ॥ (पन्ना १३९१)

"लहणा" शब्द का गुणवाचक प्रयोग : "लहणा" शब्द क्रियावाचक है। इसका अर्थ है ढूँढना; प्राप्त करना।[१] इस शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की "लभ" धातु से हुई है (इससे ही "लाभ" शब्द बनता है)। "लहणा" के साथ भाववाचक शब्द जोड़कर हमारे गुरु साहिबान ने इसके गुणवाचक अर्थ प्रस्तुत किए हैं। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा किए गए ऐसे एक प्रयोग का नमूना देखिए:

नानकु साइरु एव कहतु है सचे परवदगारा ॥
जे तू किसै न देही मेरे साहिबा किआ को कढै गहणा ॥
नानकु बिनवै सो किछु पाईऐ पुरबि लिखे का लहणा ॥ (पन्ना ६६०)

गुरबाणी के इस पद्यांश का अर्थ प्रो. साहिब सिंघ जी ने इस प्रकार किया है—

"तेरा ढाढी (=साहिरु) (अर्थात स्तुतिकर्ता) यही विनती करता है कि हे मेरे मालिक तथा जीवों के पालनकर्ता प्रभु! यदि तुम अपने प्यार का वरदान स्वयंमेव किसी जीव (सांसारिक प्राणी) को नहीं देते तो जीव (=मनुष्य) के पास ऐसी कोई "शै" (वस्तु) नहीं, जो कि विनिमय स्वरूप (कढै गहणा) देकर तुम्हारा प्यार प्राप्त किया जा सके। (गुरु) नानक देव जी विनती करते हैं कि जीव को केवल वही कुछ मिलता है जो कि पूर्व कर्मों के अनुसार संस्कार रूप लेख (उसके मस्तक पर लिखा हुआ) है।[२]

"पूरब लिखे का लहणा" का अर्थ है—"जो

*Flat No. 901, Tower No. D-3, Sagar Darshan Towers, Palm Beach Road, Nerul, Navi Mumbai-400706

कुछ मनुष्य के भाग्य में बदा है।"

ऐसा प्रतीत होता है कि पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने उपर्युक्त पद्यांश को ध्यान में रखकर उसकी व्याख्या करते समय इस रचना का संबंध श्री गुरु अंगद देव जी के जन्मगत नाम के साथ ("लहणा जी" विषयक) जोड़ने का प्रयास किया है। उनका मंतव्य हृदयंगम करने के लिए उनके मनोहर वचन सुनिए :

—प्रभ तुम ते लहणा तूं मेरा गहणा ॥
जो तूं देहि सोई सुखु सहणा ॥ (पन्ना १०६)
—सरब निधान जा की द्रिसटी माहि ॥
पुरब लिखे का लहणा पाहि ॥ (पन्ना २८३)
—सो सचु साहु जिसु घरि हरि धनु संचाणा ॥
इसु धन ते सभु जगु वरसाणा ॥
तिनि हरि धनु पाइआ जिसु पुरब लिखे का लहणा ॥
जन नानक अंति वार नामु गहणा ॥
(पन्ना ३७५)

प्रकारांतर से उपर्युक्त उद्धरणों से यही अर्थ-लाभ होता है कि प्रारंभ में देवी-भक्त रहे भाई लहणा जी को नाम-भक्ति का वरदान श्री गुरु नानक देव जी से प्राप्त होने पर वे सचमुच "किस्मत के धनी" *(जिस पुरब . . . नामु गहणा)* कहलाने के अधिकारी हुए। "किस्मत के धनी" मुहावरे का अर्थ है: "भाग्यशाली होना"। एतदर्थ श्री गुरु अरजन देव जी ने *"पुरब लिखे का लहणा"* के अतिरिक्त *"मसतकि लहणा"* मुहावरे का उपयोग भी किया है। इस पर्यायवाची मुहावरे के माध्यम से भाई लहणा जी के भाग्यशाली होने का संकेत किया गया है; यथा:

-बाह पकड़ि तिसु सुआमी मेलै जिस कै मसतकि लहणा ॥ . . .
संत जनां की धूड़ि नित बांछहि नामु सचे का गहणा ॥ (पन्ना १०९)

"अंगद" शब्द की अर्थवत्ता : अपने निराकार भक्ति-मार्ग में प्रवेश कर लेने वाले अपने परम शिष्य भाई लहणा जी को श्री गुरु नानक देव जी ने एक नया नाम "अंगद देव" बख्शा था। कल नामक भट्ट का इस संबंध में कथन है:

सचु नामु करतारु सु द्रिड़ु नानकि संग्रहिअउ ॥
ता ते अंगदु लहणा प्रगटि तासु चरणह लिव रहिअउ ॥ . . .
नानक कुलि निंमलु अवतर्यिउ अंगद लहणे संगि हुअ ॥ (पन्ना १३९५)

कल सहार नामक भट्ट ने श्री गुरु नानक देव जी की शरण में पहुंचे भाई लहणा जी पर कृपा-दृष्टि स्वरूप उनके नए नाम (गुरु) अंगद (देव जी) के साथ-साथ पितृवाचक नाम की चर्चा इस प्रकार की है:

त धरिओ मसतकि हथु सहजि
अमिउ वुठउ छजि सुरि नर गण मुनि बोहिय अगाजि ॥ . . .
सतिगुरू कल सतिगुर तिलकु सति लागै सो पै तरै ॥
गुरु जगत फिरणसीह अंगरउ राजु जोगु लहणा करै ॥ (पन्ना १३९१)

प्रो साहिब सिंघ जी के अनुसार उपर्युक्त तुकों का अर्थ है :

"तब (श्री गुरु नानक देव जी ने) तुम्हारे माथे पर हाथ रखा। फलत: (तुम्हारे हृदय में) नाम-रूपी अमृत की मूसलाधार वर्षा होने लगी। इसी के वरदानस्वरूप सभी देवता, मनुष्यगण और ऋषि-मुनि प्रत्यक्ष रूप में भीग गए।(अर्थात अमरत्व को प्राप्त हो गए)"[३]

भट्ट कल सहार का कथन है कि सद्‌गुरु (श्री गुरु अंगद देव जी) शिरोमणि गुरु हैं। जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक उनकी चरण-धूलि स्वीकार

करता है, उसका उद्धार हो जाता है। जगद्गुरु बाबा फेरू जी का सपुत्र भाई लहणा जी (गुरु) अंगद, राज एवं योग की प्राप्ति करता है।"[४]

पंजाबी का एक मुहावरा है: "अंगली-संगली रलना।" इसका अर्थ है: "निकटस्थ संबंध होना।" भारत के प्राचीन इतिहास से पूरी तरह परिचित भाई केसर सिंघ छिब्बर ने एक नवीन शोध करके प्रथम गुरु साहिब एवं द्वितीय गुरु साहिब के नैकट्य का अत्यंत सुंदर रूपक बांधा है।

पौराणिक संदर्भों के अतिरिक्त निराकार मार्ग भक्ति के परिप्रेक्ष्य में श्री गुरु नानक देव जी के साथ श्री गुरु अंगद देव जी के गुरु-शिष्य वाले प्रगाढ़ संबंधों को दर्शाने के लिए "अंगि-संगि" पदांश का प्रयोग किया है। इसी पदांश को ही भाई केसर सिंघ जी ने अपनी भाषा में ढाल कर अंगु, अंसु, हिस्सा तथा "सोई हिसे दा अंग" बना लिया है। भट्ट बाणी में "अंगि-संगि" का प्रयोग इस प्रकार हुआ है:

नानकि नामु निरंजन जान्यउ कीनी भगति प्रेम लिव लाई ॥
ता ते अंगदु अंग संगि भयो साइरु तिनि सबद सुरति की नीव रखाई ॥ (पन्ना १४०६)

इसी की चर्चा भाई गुरदास जी ने *"अंगहु अंगु उपाइओनु"* द्वारा इस प्रकार की है और इस आधार पर एक विद्वान ने 'अंगद' (=अंगज) का अर्थ 'पुत्र' भी किया है।[५] गुरु एवं शिष्य का भावात्मक ऐक्य वस्तुत: पिता-पुत्र के सद्भाव का सूचक ही है। इसकी पृष्ठभूमि में विद्यमान भाई गुरदास जी का कथन दर्शनीय है; यथा:

अंगहु अंगु उपाइओनु गंगहु जाणु तरंगु उठाइआ।
गहिर गंभीरु गहीरु गुणु गुरमुखि गुरु गोबिंदु सदाइआ।
दुख सुख दाता देणिहारु दुख सुख समसरि लेपु न लाइआ।
गुर चेला चेला गुरू गुरु चेले परचाइआ।
बिरखहु फलु फल ते बिरखु पिउ पुतहु पुतु पिउ पतीआइआ।
पारब्रहमु पूरनु ब्रहमु सबदु सुरति लिव अलख लखाइआ।
बाबाणे गुर अंगदु आइआ ॥ (वार २४:५)

श्री गुरु अंगद देव जी के नामकरण से चले श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित "अंगि-संगि" शब्द ने हमारी लोक भाषा को एक नया मुहावरा दिया है—"अंगली-संगली रलना।" इससे जन-मानस पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अकाट्य प्रभाव का मूल्यांकन किया जा सकता है।

पाद-टिप्पणियां-

१. भाई काहन सिंघ नाभा : महान कोश, पृष्ठ ७८९ (भाषा विभाग पंजाब, पटियाला)
२. प्रो. साहिब सिंघ : श्री गुरु ग्रंथ साहिब दरपण, पंजवीं पोथी; पृष्ठ ४१८ (राज पब्लिशर्ज, रजि, जालंधर)
३. वही, दसवीं पोथी; पृष्ठ ४६३
४. उपर्युक्त, पृष्ठ ४६८
५. डॉ. गुरचरन सिंघ: श्री गुरु ग्रंथ शबदारथ कोश, पन्ना ११३ (पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला)

गुर अंगद दी दोही फिरी

*-ज्ञानी बलवंत सिंघ**

प्रकृति कभी-कभी बड़े आलौकिक चमत्कार करती है। यह चमत्कार देखकर मन विस्मय हो जाता है। प्रकृति मरू भूमि पर चंदन पैदा कर देती है, पत्थरों में रत्न पैदा कर देती है, विस्मृत धरती को पूजनीय भूमि बना देती है, साधारण व्यक्यिों को दैवी गुणों से विभूषित कर देती है, संसारी कोलाहल से अज्ञात स्थानों पर परम पुरुषों का आविर्भाव कर देती है तथा पूर्ण पुरुष प्रकट करके कुल माता-पिता और धरती को पूजने योग्य बना देती है। मानव उस भूमि की धूल को मस्तक पर लगाने के लिए अग्रसर हो जाता है।

ऐसा ही चमत्कार अज्ञात विस्मृत धरती मत्ते की सरां में हुआ। माता-पिता ने नाम 'लहणा' रखा। भाई लहणा जी बचपन से ही एकांतसेवी, धार्मिक विचारों के धारक सर्वत्र के साथ सहानुभूति करने वाले थे। पिता जी भी धार्मिक गुणों वाले, धर्म-कर्म में विश्वास रखने वाले थे। वे पुत्र को भी शुभ गुणों से भरपूर देखना चाहते थे। दुकानदारी और व्यपार, वाणिज्य, हिसाब-किताब के लिए बालक लहणा जी को विद्या घर में ही पढ़ाई गई और गणित में निपुण किया गया। धार्मिक तौर पर घर की परंपरा के अनुसार भाई लहणा जी देवी के उपासक थे। आपका विवाह गांव संघर (जिसके अवशेष गांव खडूर साहिब में विद्यमान हैं) में माता खीवी जी के साथ हुआ जो साश्रात धर्म-पारायण स्त्री थीं। स्थितिवश परिवार को गांव मत्ते की सरां का त्याग करके गांव खडूर में आकर रहना पड़ा।

खडूर साहिब में (गुरु नानक देव जी के सिख) भाई जोधा जी से श्री गुरु नानक देव जी की बाणी सुन कर भाई लहणा जी को शांति और आनंद की प्राप्ति हुई। ऐसी बाणी को उचारने वाले पूर्ण गुरु के दर्शन के लिए भाई लहणा जी करतारपुर में पहुंचे। वे श्री गुरु नानक देव जी के दर्शन करके प्रसन्न हुए तथा नमस्कार करके चरणों में शाष्टांग गिर पड़े:

—डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ ॥
(पन्ना २५६)

—पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ॥ (पन्ना २०४)

भाई लहणा जी सदा के लिए गुरु जी के चरणों में रहने लगे। गुरु जी इस समय में भाई लहणा जी के सिखी विश्वास की परीक्षा लेने लगे। श्री गुरु नानक देव जी ने कई प्रकार की परीक्षा ली। एक वन को जाते समय सिखों की ओर रुपये फेंके। कुछ लोग रुपये लेकर चले गये। फिर स्वर्ण-मोहरों की वर्षा की। कुछ लोग मोहरों को लेकर घर वापिस लौट गये। जो फिर भी रह गए उन्हें गुरु जी अपने डंडे से पीटने लगे, इस कारण शेष सिख भी लौट गए पर भाई लहणा जी अडोल गुरु जी के साथ रहे।

श्री गुरु नानक देव जी ने भाई लहणा जी से कहा "पुरखा! सभी लोग वापिस चले गए हैं

**गांव व डाक: कोठा गुरु, वाया भगता, जिला बठिंडा।*

तू क्यों नहीं जाता?" भाई लहणा जी ने नम्रता के साथ चरणों में सिर रख कर जो उत्तर दिया उसमें इन पंक्तियों का भाव विद्यमान था:

किस ही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू ॥
किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही ॥
(पन्ना ७९१)

"जो लोग घरों को चले गए हैं शायद उनका कोई और होगा, मेरे तो सब कुछ आप ही हो। मैं आप को छोड़ कर कहां जाऊं?" गुरु जी ने कहा, "पुरखा! हमारा साथ निभाएगा?" भाई लहणा जी ने कहा, "आपके आशीर्वाद से आपके चरणों में ही रहूंगा।"

गुरु जी ने भाई लहणा जी को अपने चरणों से उठा कर अपनी छाती के साथ लगा लिया और कहा, "पुरखा! तुमने जो लेना था ले लिया। तुम अब 'लहणा' नहीं रहे, 'अंगद' बन गये हो—मेरा अपना अंग, मेरा निज स्वरूप।"

श्री गुरु नानक देव जी करतारपुर अपने निवास-स्थान पर आ गए। परीक्षा में भाई लहणा जी उत्तीर्ण हो गये:

सिखां पुत्रां घोखि कै सभ उमति वेखहु जि किओनु ॥
जां सुधोसु तां लहणा टिकिओनु ॥ (पन्ना ९६७)

दूसरे दिन सर्व संगत, की उपस्थिति में भाई लहणा जी को आसन पर बैठाकर अपनी बाणी की पोथी और पांच पैसे भाई लहणा जी के संमुख रख कर गुरु नानक पातशाह ने नमस्कार किया। नमस्कार करते हुए अपनी ज्योति भाई लहणा जी में आवेश कर दी। ज्योति आवेश करके भाई लहणा जी से 'अंगद' बना दिया। सर्व संगत से कहा कि आज से आप सब के गुरु, गुरु अंगद देव जी हैं। ये मेरा ही स्वरूप हैं। गुरु ज्योति के आवेश का गुरबाणी में विस्तार सहित वर्णन हुआ है:

—नानकि राजु चलाइआ सचु कोटु सताणी नीव दै ॥
लहणे धरिओनु छतु सिरि करि सिफती अंम्रितु पीवदै ॥ . . .
लहणे दी फेराईऐ नानका दोही खटीऐ ॥
जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ ॥ (पन्ना ९६६)
—गुर अंगद दी दोही फिरी सचु करतै बंधि बहाली ॥
नानकु काइआ पलटु करि मलि तखतु बैठा सै डाली ॥ (पन्ना ९६७)

भाई गुरदास जी ने कहा है:

थपिआ लहिणा जींवदे गुरिआई सिरि छत्रु फिराइआ।
जोती जोति मिलाइ कै सतिगुर नानकि रूपु वटाइआ। (वार १:४५)

'पुरातन जन्म साखी' में भी कहा है:

तितु पहिल जो सबद होआ सो पोथी जु बानि गुरु अंगद जोग मिली।

भाई गुरदास जी ने व्याख्यापूर्वक कथन किया है:

पारसु होआ पारसहु सतिगुर परचे सतिगुरु कहणा।
चंदनु होइआ चंदनहु गुर उपदेस रहत विचि रहणा।
जोति समाणी जोति विचि गुरमति सुखु दुरमति दुख दहणा।
अचरज नो अचरजु मिलै विसमादै विसमादु समहणा।
अपिउ पीअण निझरु झरणु अजरु जरणु असहीअणु सहणा।
सचु समाणा सचु विचि गाडी राहु साधसंगि वहणा।
बाबाणै घरि चानणु लहणा ॥ (वार २४:६)

श्री गुरु नानक देव जी ने गुरुआई का तिलक देकर श्री गुरु अंगद देव जी को खडूर साहिब में जाकर धर्म-प्रचार करने का वचन किया। श्री गुरु अंगद देव जी इन वचनों के

अनुरूप खडूर साहिब में आ गये। भाई गुरदास जी ने लिखा है:

दिता छोड़ि करतार पुरु बैठि खडूरे जोति जगाई । *(वार १:४६)*

'रामकली की वार' में लिखा है:

फेरि वसाइआ फेरुआणि सतिगुरि खाडूर ॥

(पन्ना ९६७)

भाव अब सिखी का केंद्र खडूर साहिब बन गया। श्री गुरु अंगद देव जी ने श्री गुरु नानक देव जी के स्थापित किए सिद्धांत को घर-घर में पहुंचाया, जीवन में पांच विशेष उपकार किए जिनका संक्षेप शब्दों में निरूपण किया जा रहा है—

१. गुरमुखी लिपि : श्री गुरु नानक जी के समय पंजाब में यद्यपि लोक-भाषा पंजाबी प्रचलित थी, तथापि इस भाषा की प्रमाणित, वैज्ञानिक लिपि नहीं थी। संस्कृत की लिपि देवनागरी थी जो ब्राह्मणों तथा मंदिरों तक सीमित थी। राजकीय लिपि फारसी (शाहमुखी) थी। पंजाब के जनसाधारण व ग्रामीण लोग इन दोनों लिपियों से अज्ञात थे। पंजाब के व्यापारी एवं हटवाणिए अपने लेखे-पत्ते (बहीखाते) के लिए टाकरी (लंडे) के अक्षरों का प्रयोग करते थे। इस समय पंजाब में शारदा, टाकरी एवं गुरमुखी लिपियों का प्रचलन था परन्तु इनका कोई वैज्ञानिक आकार नहीं था। श्री गुरु अंगद देव जी ने सन् १५४१ ई को गुरमुखी लिपि में सुधार किया। 'उ', 'अ', 'इ' इन तीनों 'स्वर' अक्षर पहले रखे गए। तत्पश्चात सभी व्यंजन अक्षरों का संग्रह किया गया। पांच-पांच अक्षरों की पंक्तियां बनाई गईं। इस 'वर्णमाला' को पंजाबी भाषा में 'पैंती' कहते हैं। अनेक प्रकार से सुधार कर गुरमुखी लिपि को उच्च स्तर का साहित्य लिखने के योग्य बनाया गया। गुरु जी के परिश्रम से गुरमुखी वैज्ञानिक लिपि बन गई। गुरु जी द्वारा शोध किए जाने के कारण यह लिपि 'गुरमुखी' के नाम से विश्व-विख्यात हुई। गुरु जी ने गुरमुखी में स्वयं अपने कर-कमलों से "बाल-बोध" नामक लघु-पुस्तिका जिसका सन् १९५० ई तक "बाल उपदेश" नाम प्रचलित था, गुरमुखी के विद्यार्थियों के लिए बनाई।

गुरमुखी के प्रचलित होने के साथ सिख लोग गौरव अनुभव करने लगे। पंजाबी भाषा को स्वतन्त्र लिपि मिल गई। इस लिपि के अंतर्गत गुरबाणी और अन्य ग्रंथ लिखे जाने लगे। यह श्री गुरु अंगद देव जी की महान देन है। खडूर साहिब में गुरु जी ने गुरमुखी के सुधार के लिए जहां विद्यालय आरंभ किया था वहां पर अब गुरुद्वारा 'पट्टी साहिब' सुशोभित है।

२. जन्म साखी और गुरबाणी : श्री गुरु अंगद देव जी ने जो दूसरा महान कार्य किया वह श्री गुरु नानक देव जी की कथा को अंकित करना था। श्री गुरु नानक देव जी की यात्राओं की कथाएं भाई पैड़े मोखे से गुरमुखी में 'साखी बाबे नानक जी की' सं. १६०१ वि. में लिखवाई। साथ ही श्री गुरु नानक देव जी की समूह बाणी को शुद्ध रूप में लिख कर पोथी तैयार की गई। श्री गुरु अंगद देव जी दूर-दूर की सिख संगतों को गुरबाणी के गुरमुखी में उतारे करके भी भेजते रहे। इस तरह गुरबाणी और गुरमुखी लिपि दूर-दूर सिख संगत तक पहुंचती रही।

३. जपु जी साहिब : श्री गुरु नानक देव जी की प्रमुख बाणी 'जपु जी साहिब' ३८ पउड़ियों में है। पंडित करतार सिंघ जी दाखा ने लिखा है कि अंतिम श्लोक *(पवणु गुरू पाणी पिता)* श्री गुरु अंगद देव जी का लिखा हुआ है। यह श्लोक श्री गुरु नानक देव जी की आज्ञा से 'जपु जी साहिब' के अंत में लिखा गया है।

यह श्लोक 'माझ की वार' में एक-दो अक्षरों/मात्राओं की भिन्नता से महला २ के

शीर्षक से श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना १४६ पर अंकित है।

४. *लंगर :* लंगर की स्थापना श्री गुरु नानक देव जी ने की थी। गुरु जी ने घर से २० रुपये लिए और लंगर आरंभ कर दिया। करतारपुर में भी स्वयं कृषि का कठिन कार्य करते हुए लंगर चलाते थे। श्री गुरु नानक देव जी के सिद्धांतानुसार श्री गुरु अंगद देव जी ने भी लंगर को प्रमुखता दी। गुरु जी का लंगर रात-दिन चलता था। दूर-दूर के व्यक्ति/यात्री लंगर पाकर तृप्त होते थे। लंगर की परंपरा के अनुसार सबको पंगत में बैठाया जाता था। जो ऊंच-नीच, जात-पात का बंधन था उसको तोड़ने में गुरु जी के लंगर ने विशेष योगदान पाया। लंगर के कारण गुरु जी की दूर-दूर तक ख्याति हुई। जो गुरु जी के लंगर का परशादा छकता था, वह गुरु-स्तुति करता जाता था। गुरु जी के लंगर की यह भी विशेषता थी कि इस भोजनालय में अनेक प्रकार के मिष्ठान बनते थे। विशेष करके 'खीर' प्रतिदिन बनाई जाती थी, जिसमें 'घी' भी खूब डाला जाता था। लंगर का सारा प्रबंध गुरु जी के महिल माता खीवी जी करते थे। लंगर को चलाने और बरताने वाले माता जी का श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विशेष सत्कारपूर्वक वर्णन आया है:

बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रितु खीरि घिआली ॥
(पन्ना ९६७)

लंगर के कारण गुरसिखी की प्रसिद्ध स्तुति दूर-दूर तक फैल गई। लंगर सिखी के प्रचार का मुख्य साधन बना।

५. *शारीरिक शक्ति एवं कसरत :* शरीर को शक्तिशाली एवं ऋष्ट-पुष्ट बनाने के लिए युवकों को शाम के समय कसरत व वर्जिश करवाई जाती थी। युवकों के दंगल करवाये जाते थे। ऋष्ट-पुष्ट बलवान शरीर में बलवान आत्मा हो, शरीर और आत्मा को चलाने वाला शक्तिशाली मन हो, गुरु जी का ऐसा सिद्धांत, मत था। गुरु जी के समय में युवक श्रेणी दुर्बल बन चुकी थी। युवकों के दंगल करवाना, उनके मन-आत्मा को उत्साह प्रदान करना आप जी का महान कार्य था।

६. *निर्भयता :* साथ ही प्रकरण अनुसार गुरु जी की निर्भयता का भी वर्णन करना अप्रासंगिक या अनुचित न होगा। जब हुमायूं शेरशाह सूरी से कन्नौज के युद्ध में परास्त होकर पंजाब की ओर भाग आया था तो उस समय खडूर साहिब में श्री गुरु अंगद देव जी के दरबार में भी आया। इस समय गुरु जी समाधि-स्थिर, नाम-चिन्तन में बैठे थे। हुमायूं का हाथ तलवार के कब्जे (मुट्ठे) पर चला गया। गुरु जी मुस्कराये और बोले, "जहां तलवार उठानी थी, वहां से भाग आया है, अब तलवार उठाता है। यह किस तरह की बहादुरी है?"

गुरु जी के सच्चे एवं निर्भयतापूर्ण वचन सुनकर हुमायूं गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा और उसने क्षमा-याचना की। गुरु जी ने उसे क्षमा कर दिया।

यह ऐसे निर्भयता भरे वचन हैं जिस तरह के श्री गुरु नानक देव जी ने ऐमनाबाद में बाबर को कहे थे। इस प्रकार श्री गुरु अंगद देव जी क्रियात्मक रूप में श्री गुरु नानक देव जी के गुरमति मार्ग को आगे चला रहे थे। उन्होंने श्री गुरु नानक देव जी की आज्ञा को शिरोधार्य करके उनके आदेश का पालन करते हुए विश्व-कल्याण का सर्व भार उठा लिया। गुरबाणी में फरमान है:

करहि जि गुर फरमाइआ सिल जोगु अलूणी चटीऐ ॥ *(पन्ना ९६६-६७)*

■

श्री गुरु अंगद देव जी की बाणी के अनुसार जीवन-विधि

-डॉ. परमजीत कौर*

श्री गुरु अंगद देव जी का जन्म गांव सराए नागा (मत्ते दी सरां) जिला मुक्तसर (पंजाब) में ५ वैशाख सं. १५६१ तदनुसार ३१ मार्च १५०४ ई को हुआ। आप जी के पिता जी का नाम बाबा फेरूमल जी तथा माता जी का नाम माता दया कौर (सभराई) जी था। आपने कुल ६३ श्लोकों की रचना की जो श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अमरदास जी तथा श्री गुरु रामदास द्वारा उच्चारण जी की गई वारों की पउड़ियों के साथ दर्ज किये गये हैं। आप जी की बाणी जीवनोपयोगी उपदेशों द्वारा भटके हुये मनों को शान्ति प्रदान करती है तथा जीवन-लक्ष्य की प्राप्ति के बारे में सजग करती है।

दुर्लभ देह को प्राप्त करके नाम-सुमिरन करते हुये जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति तथा परमात्मा में लीनता ही इस जीवन का उद्देश्य होना चाहिये। प्रभु के नाम में चित्त न लगाया जाये तो जीवन व्यर्थ हो जाता है। श्री गुरु अंगद देव जी समझा रहे हैं:

निहफलं तसि जनमसि जावतु ब्रहम न बिंदते ॥
सागरं संसारसि गुर परसादी तरहि के ॥
(पन्ना १४८)

वही जीव मनुष्य कहलाने का अधिकारी है जो प्रभु-प्रेम में लीन रहता है। गुरु साहिब के मतानुसार जो सिर अपने स्वामी के आगे नहीं झुकता, श्रद्धा सहित नमस्कार नहीं करता, उस सिर को काट देना चाहिये:

जो सिरु सांई ना निवै सो सिरु दीजै डारि ॥
(पन्ना ८९)

मनुष्य मात्र चाहे किसी भी जाति-वर्ण से सम्बंधित हो उसका एक ही धर्म है—नाम-सुमिरन। प्रभु की बंदगी करने वाले का जीवन ही सफल होता है। बंदगी करने वाला मनुष्य परमात्मा की कृपा का पात्र होता है:

नदरि तिन्हा कउ नानका नामु जिन्हा नीसाणु ॥
(पन्ना १२३९)

बंदगीहीन मनुष्य अन्धे मनुष्य की भांति पग-पग भटकता रहता है। वास्तव में अन्धा वह है जिसने परमात्मा को विस्मृत कर दिया है:

अंधे सेई नानका खसमहु घुथे जाहि ॥
(पन्ना ९५४)

इसलिये जरूरी है कि मनुष्य अमृत-वेला में सतसंग में जाकर सारा दिन भद्र पुरुषों की संगत में रहे:

चउथै पहरि सबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ ॥
तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ ॥ *(पन्ना १४६)*

मन को प्रभु में लगाने के लिये आवश्यक है कि उसके पूर्व-स्वभाव को बदला जाये। किसी एक बर्तन में कोई दूसरी वस्तु तब ही रखी जा सकती है यदि उसमें पड़ी हुई पहली वस्तु निकाल दी जाये। मन में से माया के मोह को निकालकर ही मन को प्रभु-भक्ति में लगाया जा सकता है:

*अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज, संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)

वसतू अंदरि वसतु समावै दूजी होवै पासि ॥
साहिब सेती हुकमु न चलै कही बणै अरदासि ॥
(पन्ना ४७४)

परमात्मा के नाम को हृदय में बसाने के लिये गुरु-शब्द पर विचार करना आवश्यक है ताकि गुरबाणी के अनुसार जीवन बनाया जा सके। गुरबाणी के अनुसार जीवन-राह पर चलकर ही अहंकार दूर करके स्वभाव को विनम्र बनाया जा सकता है। गुरु साहिब समझाते हैं कि अहंकार (हउमै) एक दीर्घ रोग है पर यह लाइलाज नहीं है। यदि प्रभु की कृपा हो जाये तो जीव गुरु-शब्द अनुसार जीवन-यापन करता हुआ अहंकार को दूर कर सकता है:

हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि ॥
किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि ॥
(पन्ना ४६६)

गुरमति मार्ग पर चलने के लिये गुरु की शरण लेनी जरूरी है। गुरु के बिना अज्ञानता का अन्धकार दूर नहीं होता:

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बिनु समझ न आवै ॥
(पन्ना १३९८९)

मनुष्य का मन मानो कोठा है तथा शरीर इस कोठे की छत है। माया की पाह का इस मन कोठे को ताला लगा हुआ है। इस ताले को खोलने के लिये 'गुरु' चाबी है भाव मन से माया का प्रभाव 'गुरु' ही दूर कर सकता है:

नानक गुर बिनु मन का ताकु न उघड़ै अवर न कुंजी हथि ॥ *(पन्ना १२३७)*

गुरु की शरण में आये बिना मोह के बंधनों से मुक्ति नहीं मिलती, आत्मिक जीवन की समझ नहीं आती। मानव-स्वभाव है कि वह कभी तृप्त नहीं होता। मुंह बोल-बोल कर तृप्त नहीं होता, कान बातें सुन-सुन कर भी अतृप्त रहते हैं। विभिन्न रसों के अधीन हुई इंद्रियां अपने विषयों से स्वयं को वर्जित नहीं करतीं। समझाने पर भी भूख शांत नहीं होती। तृष्णा के अधीन हुआ मनुष्य तभी तृप्त हो सकता है जब गुरमति के अनुसार चलता हुआ प्रभु का गुण-कीर्तन करता रहे तथा गुणों के स्वामी प्रभु में लीन रहे:

आखणु आखि न रजिआ सुनणि न रजे कंन ॥
अखी देखि न रजीआ गुण गाहक इक वंन ॥
भुखिआ भुख न उतरै गली भुख न जाइ ॥
नानक भुखा ता रजै जा गुण कहि गुणी समाइ ॥
(पन्ना १४६)

प्रभु-प्राप्ति की डगर पर चलने के लिये हउमै, मेर-तेर की भावना को त्याग कर जीवित रहते हुये ('मैं' के अभाव से) मर जाना जरूरी है। संसार में रहते हुये, जीवित होते हुये कैसे मरा जा सकता है, इसको विस्तार से समझाते हुये श्री गुरु अंगद देव जी कथन करते हैं कि यदि आंखों के बिना देखें, भाव यदि नेत्रों को पर-रूप देखने से रोक लिया जाये; कानों के बिना सुनें, भाव यदि कानों से निन्दा सुनने की आदत को हटा लिया जाये; यदि पैरों के बिना चला जाये, भाव पैरों को गलत तरफ जाने से रोक लिया जाये; यदि हाथों के बिना काम करें, भाव हाथों से कोई दुष्कर्म, किसी के नुकसान का कोई कार्य न किया जाये तो मनुष्य जीवित रहता हुआ मर सकता है:

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥
(पन्ना १३९)

अपने-अपने कर्मों के अनुसार जीव परमात्मा के निकट या उससे दूर होता है। परमात्मा के नाम में मन लगाने वाले नाम जप कर अपना

जीवन सफल कर लेते हैं:
चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि ॥
करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ॥
जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥
(पन्ना ८)

मनुष्य चाहे जितना भी प्रयास कर ले मगर मन के हठ से परमात्मा का सामीप्य प्राप्त नहीं किया जा सकता। वही मनुष्य परमात्मा की कृपा का पात्र बनता है जो शुभ भावना रखता हुआ गुरु-शब्द की विचार करके उसमें निर्दिष्ट नियमों के अनुसार जीवन बनाता है:
मनहठि तरफ न जिपई जे बहुता घाले ॥
तरफ जिणै सत भाउ दे जन नानक सबदु वीचारे ॥ *(पन्ना ७८७)*

मनुष्य मंद कर्मों से अपने को रोक सके, इसके लिये हृदय में परमात्मा का डर होना आवश्यक है। गुरु जी का कथन है कि यदि जीव प्रभु के डर में चलने को अपने पैर बनाये, प्यार के हाथ बनाये तथा प्रभु की याद में रहने को आंखें बनाये तो प्रभु को मिल सकता है:
दिसै सुणीऐ जाणीऐ साउ न पाइआ जाइ ॥
रुहला टुंडा अंधुला किउ गलि लगै धाइ ॥
भै के चरण कर भाव के लोइण सुरति करेइ ॥
नानकु कहै सिआणीए इव कंत मिलावा होइ ॥
(पन्ना १३९)

चाहे दुख हो या सुख, सदा प्रभु का ही आश्रय लेना चाहिये:
जां सुखु ता सहु राविओ दुखि भी संम्हालिओइ ॥
नानकु कहै सिआणीए इउ कंत मिलावा होइ ॥
(पन्ना ७९२)

सेवा, सुमिरन में सदैव सहायक है। सेवा करने से मन निर्मल होता है, अहंकार दूर हो जाता है, स्वभाव में विनम्रता आ जाती है तथा जीवन परोपकारी हो जाता है। जिस सेवा को करने से सेवक का दिल प्रभु-प्रेम से पूर्ण नहीं, होता वह सेवा वास्तविक सेवा नहीं है। सेवक वही है जो अपने स्वामी से एकरूप हो जाता है:
एह किनेही चाकरी जितु भउ खसम न जाइ ॥
नानक सेवकु काढीऐ जि सेती खसम समाइ ॥
(पन्ना ४७५)

गुरु साहिब सुखी जीवन के लिये नुकते बता रहे हैं। गुरु साहिब समझा रहे हैं कि *'हुकमि रजाई चलणा'* जीवन का सही मार्ग है। जीव के जीवन की डोर परमात्मा के हाथ में है:
नकि नथ खसम हथि . . . ॥ (पन्ना ६५३)

राजा तथा रंक सब को परमात्मा के हुक्म में चलना पड़ता है, जीवों के वश में कुछ नहीं है। वही कार्य शुभ मानना चाहिये जो परमात्मा को अच्छा लगता है:
चीरी जिस की चलणा मीर मलक सलार ॥
जो तिसु भावै नानका साई भली कार ॥
जिन्हा चीरी चलणा हथि तिन्हा किछु नाहि ॥
साहिब का फुरमाणु होइ उठी करलै पाहि ॥
(पन्ना १२३९)

जीवन में आये सुख-दुख को प्रभु की रजा समझकर स्थिरचित्त रहना मानसिक शान्ति प्रदान करता है। दूसरों के कार्य की जांच-पड़ताल करने की अपेक्षा अपनी परख करनी चाहिये:
नानक परखे आप कउ ता पारखु जाणु ॥
(पन्ना १४८)

किसी को भी बुरा नहीं कहना चाहिये। सभी जीवों का स्वामी एक प्रभु ही है:
मंदा किस नो आखीऐ जा सभना साहिबु एकु ॥
(पन्ना १२३८)

परमात्मा का ही गुण-कीर्तन करना चाहिये।

अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिये लोगों की प्रशंसा करने में समय नहीं गंवाना चाहिये:

कीता किआ सालाहीऐ करे सोइ सालाहि ॥
नानक एकी बाहरा दूजा दाता नाहि ॥
(पन्ना १२३९)

यदि कोई कार्य जबरदस्ती मजबूरी में किया जाये तो उसका कोई लाभ नहीं होता। इसी तरह मन के हठ से जबरदस्ती भक्ति करने से भी कोई आत्मिक लाभ नहीं होता:

बधा चटी जो भरे ना गुणु न उपकारु ॥
सेती खुसी सवारीऐ नानक कारजु सारु ॥
(पन्ना ७८७)

मूर्ख के साथ प्यार, पानी में लकीर बनाने के समान होता है जिसका कोई निशान नहीं रहता:

नालि इआणे दोसती कदे न आवै रासि ॥
जेहा जाणै तेहो वरतै वेखहु को निरजासि ॥
(पन्ना ४७४)

मानव-शरीर नश्वर है। एक न एक दिन सबने यहां से जाना ही है। जिनको यह बात समझ में आ जाती है वे व्यर्थ के सांसारिक प्रपंचों में नहीं पड़ते। सिर्फ सांसारिक धन्धों में ही लिप्त रहने वाले यहां से जाने की बात भूल जाते हैं तथा अंतिम समय में पश्चाताप करते हैं कि सारी उम्र जो धन एवं पदार्थ एकत्र करते रहे वे सब तो यहीं पर ही रह जाएंगे:

जिनी चलणु जाणिआ से किउ करहि विथार ॥
चलण सार न जाणनी काज सवारणहार ॥
राति कारणि धनु संचीऐ भलके चलणु होइ ॥
नानक नालि न चलई फिरि पछुतावा होइ ॥
(पन्ना ७८७)

इसलिये अधिक धन एकत्र करने तथा जायदाद आदि बनाने के चक्कर में नहीं पड़ना चाहिये। दुनिया द्वारा मिलने वाले आदर-सम्मान आदि की प्राप्ति की इच्छा परमात्मा से दूर ले जाती है जिसका मृत्यु के उपरान्त कुछ लाभ प्राप्त नहीं होता:

नानक दुनीआ कीआं वडिआईआं अगी सेती जालि ॥
एनी जलीईं नामु विसारिआ इक न चलीआ नालि ॥ *(पन्ना १२९०)*

जो मनुष्य अपने सांसों की सारी पूंजी नाम के व्यापार में लगा देते हैं उन पर परमात्मा की कृपा होती है:

नदरि तिना कउ नानका जि साबतु लाए रासि ॥
(पन्ना १२३८)

गुरु साहिब संक्षेप में समझाते हैं कि जिस मनुष्य के हृदय में नाम का निवास हो जाता है वह सांसारिक विषयों से विमुख हो जाता है। परिवार के साथ भी उसका वह मोह नहीं रह जाता जो त्रिगुणात्मक माया में फंसाता है। ऐसा मनुष्य प्रभु को सदैव आठों पहर अपने विचार-मण्डल में टिकाये रखता है किन्तु ऐसे मनुष्य बहुत कम मिलते हैं जो अथाह, अगोचर, अगम्य, अनन्त प्रभु के दीदार में लीन रहते हैं:

सेई पूरे साह जिनी पूरा पाइआ ॥
अठी वेपरवाह रहनि इकतै रंगि ॥
दरसनि रूपि अथाह विरले पाईअहि ॥
(पन्ना १४६)

■
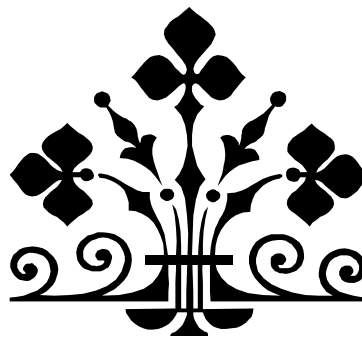
बहुपक्षीय व्यक्तित्व श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी

*-डॉ. प्रदीप शर्मा स्नेही**

हमारा देश भारत महान है। यहां की पवित्र भूमि का कण-कण विभिन्न युगों में, यहां अवतरित होने वाली सात्विक आत्माओं की सुरभि से सुवासित है। जब-जब राष्ट्रीय अस्मिता पर संकट आया, अत्याचार व सामाजिक विषमताएं बढीं, तब-तब युगपुरुषों का यहां अवतरण हुआ।

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मूल्यों का पतन पराकाष्ठा पर था। भारतीय जनमानस, औरंगजेब जैसे दुराचारी शासक के अत्याचारों से त्रस्त था। भय, निराशा व असन्तोष का अंधकार सम्पूर्ण परिवेश में गहरा रहा था। ऐसे में श्री गुरु तेग बहादर जी के घर माता गुजरी जी के गर्भ से पटना में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जन्म हुआ। अपनी तेजस्विता से उन्होंने सम्पूर्ण भारतीय जनमानस को प्रभावित किया। कालान्तर में वे राष्ट्रीय क्षितिज पर एक जाज्वल्यमान नक्षत्र की भांति प्रदीप्त हुए।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बाल्यावस्था के प्रारम्भिक छः वर्ष गंगा के किनारे बाल-क्रीड़ाएं करते, शिक्षा प्राप्त करते व शस्त्र-विद्या में निपुणता प्राप्त करते पटना में व्यतीत हुए। पटना के राजा फतहचन्द, उनकी रानी व समस्त पटनावासी बाल-गुरु के सौन्दर्य, तेजस्विता व निर्भयता से अभिभूत थे। जब श्री गुरु तेग बहादर जी ने परिवार को पटना से आनंदपुर साहिब (पंजाब) बुलवा भेजा तो पटनावासियों, राजा व रानी ने अश्रुपूरित नेत्रों से उन्हें विदा किया। गुरु जी ने 'बचित्र नाटक' की कुछ पंक्तियों में इसका उल्लेख किया है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी, माता नानकी जी, माता गुजरी जी व अन्य सेवकों के साथ अयोध्या, वाराणसी, प्रयाग होते हुए ननिहाल, लखनौर (अंबाला के निकट) पहुंचे। पिता श्री गुरु तेग बहादर जी की आज्ञा से कुछ दिन वहां रहने के बाद जब वे आनंदपुर साहिब पहुंचे तो लोगों के झुंड के झुंड "बाला प्रीतम" के दर्शनार्थ उमड़ पड़े। पिता-पुत्र के आलौकिक मिलन को देखकर लोगों की आंखों से अश्रुधारा बहने लगी। आनंदपुर साहिब में ही उन्होंने मुंशी साहिब चन्द से हिन्दी व संस्कृत तथा काजी पीर मुहम्मद से फारसी की शिक्षा प्राप्त की। सैन्य-संचालन की शिक्षा भी उन्होंने यहां प्राप्त की। यहीं उन्होंने अपने पिता श्री गुरु तेग बहादर जी को आत्म-बलिदान के लिए प्रेरित किया।

श्री गुरु तेग बहादर जी अपने सपुत्र की साहसपूर्ण व आशावादी दृष्टि से संतुष्ट हो गये। सन् १६७५ ई में दिल्ली के चांदनी चौक (जहां आज गुरुद्वारा सीसगंज साहिब विद्यमान है) में श्री गुरु तेग बहादर जी समय के पीड़ित हिंदू धर्म को बचाने के लिए शहीद हो गये। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने असीम धैर्य एवं परिपक्वता का परिचय दिया।

आनंदपुर साहिब में हुए ऐतिहासिक दीवान में बाल-गुरु को दशम पातशाह के रूप में शोभायमान किया गया। गुरगद्दी पर शोभायमान होते ही उन्होंने अपने बलिदानी पिता को दिये

**वरिष्ठ व्याख्याता, एस. ए. जैन कॉलेज, अंबाला शहर (हरियाणा)*

हुए वचनानुसार अत्याचारों व कुरीतियों के विरुद्ध लड़ने का दृढ़ निश्चय कर लिया। उन्होंने पिता-गुरु के इस पावन फरमान को हमेशा अपने सन्मुख रखा:

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥
(पन्ना १४२७)

शस्त्रधारी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने आनंदपुर साहिब में भजन-कीर्तन के साथ-साथ सैन्य-प्रशिक्षण का कार्य भी आरंभ कर दिया। जीवन के अधिकांश भाग में आनंदपुर साहिब उनका कर्मस्थल रहा। शिवालिक की पहाड़ियों में जीवन का महत्वपूर्ण भाग व्यतीत किया। शिवालिक की पहाड़ी रियासतों के राजपूत राजाओं को उन्होंने मुगल सल्तनत की निरंकुशता के विरुद्ध एकजुट हो उठ खड़े होने का आह्वान किया लेकिन क्षुद्र स्वार्थों से सराबोर, गुरु जी की बढ़ती लोकप्रियता के प्रति ईर्ष्यागत भाव के रहते मुगलों के विरुद्ध खड़े होना तो दूर वे गुरु जी के विरुद्ध ही खड़े हो गये।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नेतृत्व में गुरु के सिखों ने नाहन के निकट भंगाणी के मैदान में पहाड़ी राजाओं को करारी शिकस्त देकर उनका मान-मर्दन किया। आनंदपुर साहिब लौटकर उन्होंने अपनी सैन्य-शक्ति का पुनर्गठन किया। गुरु जी का मुख्य उद्देश्य अन्याय व अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करने के लिये जनसाधारण को सुशिक्षित करना था।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी जीवन भर सतत्, अन्याय के विरुद्ध संघर्षशील रहे। अपने संघर्षशील जीवन में से भी उन्होंने काव्य-सृजन के लिए समय निकाल लिया। युद्ध एवं काव्य में उनकी रुचि समान थी और उन्होंने दोनों का प्रयोग एक ही लक्ष्य की पूर्ति हेतु किया। उन्होंने न केवल स्वयं काव्य का सृजन किया अपितु अपने दरबार में अनेक कवियों को प्रश्रय भी दिया। गुरु जी की बाणी 'दशम ग्रंथ' नामक ग्रंथ में संकलित है। भाई काहन सिंघ नाभा के 'महान कोश' के अनुसार गुरु-दरबार में भाई नन्द लाल जी, भाई बिधी चन्द जी व भाई अमृत राय जी सहित ५२ कवि थे। गुरु जी स्वयं कई भाषायों के विद्वान कवि थे। गुरु जी का जीवन शस्त्र व शास्त्र, भक्ति व शक्ति का अद्भुत समन्वय था। उन्होंने जीवन भर युद्धरत रहने के उपरांत भी बहुमूल्य साहित्य सम्पदा को संभाले रखने की भरसक चेष्टा की।

खालसा पंथ का सृजन : संवत् १७५६ (१६९९ ई) की वैसाखी का दिन भारतीय इतिहास का स्वर्णिम दिन था। लाखों लोग आनंदपुर साहिब में जमा हुए। इसी दिन गुरु जी ने खालसा पंथ का सृजन किया। गुरु जी के आह्वान पर पांच विभिन्न तथाकथित जातियों के युवक अपना शीश अर्पित करने के लिए सामने आये। वे गुरु जी की परीक्षा में खरे उतरे। गुरु जी ने उन्हें अमृत-पान कराकर सिंघ बना दिया। लोहे के बाटे में स्वच्छ जल डालकर तथा खंडा फेरकर पांच बाणियों का पाठ किया गया। माता जीतो जी ने बताशे डाले व अमृत तैयार किया गया। वे पांच सिंघ थे—भाई दयाराम जी, भाई धर्म दास जी, भाई मोहकम चंद जी, भाई साहिब चंद जी और भाई हिम्मत राय जी। गुरु जी ने उन्हें "पांच प्यारे" नाम दिया। उसी दिन से वे भाई दया सिंघ जी, भाई धर्म सिंघ जी, भाई मोहकम सिंघ जी, भाई साहिब सिंघ जी व भाई हिम्मत सिंघ जी कहलाये। गुरु जी ने अकाल पुरख का सुमिरन करने, परिश्रम करने व पांच वस्तुएं—केश, कंघा, कड़ा, कृपाण एवं कछहरा धारण करने का आदेश दिया। फिर उन्हीं पांच प्यारों

से गुरु जी ने स्वयं अमृत-पान कर कहा कि अब मेरे व तुम्हारे में कोई भेद नहीं। यह एक अभूतपूर्व घटना थी। समाजवाद व समरसता की परिकल्पना को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी १९१७ की अक्तूबर की क्रान्ति से २०० वर्ष से भी अधिक समय पूर्व मूर्त्त रूप दे चुके थे। उनका समाजवाद अभूतपूर्व था। सभी जातियों के लोग भेदभाव मिटाकर एक साथ बैठकर गुरु-स्थानों में लंगर छकने लगे।

हजारों अन्य व्यक्तियों ने भी वैसाखी के उस पावन दिन अमृत-पान किया था। भक्त-मंडली, शक्तिवाहिनी में परिवर्तित हो गयी। संत-सिपाहियों की नयी फौज अस्तित्व में आयी जो आवश्यकता पड़ने पर धर्म-रक्षा करने में सक्षम थी। यही गुरु जी के जीवन का उद्देश्य व उनका जीवन-दर्शन था :

या ही काज धरा हम जनमं ॥
समझ लेहु साधू सम मन मं ॥
धरम चलावन संत उबारन ॥
दुसट सभन को भूल उपारन ॥ (बचित्र नाटक)

"वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतह" के उद्घोष ने कमजोर लोगों में भी साहस का संचरण कर दिया। वस्तुत: खालसा पंथ की स्थापना कर गुरु जी ने वर्ण-भेद का नाश कर सामाजिक समसरता का शंखनाद किया। आज के युग में गुरु जी के विचारों की प्रासंगिकता और अधिक महत्वपूर्ण हो गयी है। उनका फरमान था:

हिंदु तुरक कोऊ राफजी इमाम साफी
मानस की जात सबै एकै पहिचानबो ॥
(अकाल उसतति पा: १०)

१७०१ ई में एक बार फिर पहाड़ी राजाओं ने एकत्रित होकर गुरु जी को नीचा दिखाने की नीयत से आनंदपुर साहिब पर आक्रमण कर दिया, लेकिन वे पुन: पराजित हुए तथा उन्होंने औरंगजेब से सहायता मांगी। शाही सेना व पहाड़ी राजे जब कुछ न कर सके तो औरंगजेब ने पुन: ख्वाजा जफर बेग को भारी सेना देकर भेज दिया। भीषण लड़ाई में गुरु जी को आनंदपुर साहिब छोड़ना पड़ा। उन्होंने चमकौर नामक गांव में स्थित एक हवेली में मोर्चा जमा लिया। गुरु जी के दो सपुत्र साहिबजादा अजीत सिंघ व साहिबजादा जुझार सिंघ यहां लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। गुरु जी को चमकौर छोड़ना पड़ा। उधर गंगू नामक एक धोखेबाज सेवक ने दोनों छोटे साहिबजादों—बाबा जोरावर सिंघ व बाब फतह सिंघ को सरहिंद के सूबेदार के हाथों गिरफ्तार करा दिया, जिसने उन्हें दीवार में जीवित चिनवा दिया। नन्हें बालकों का यह बलिदान युगों-युगों तक अमर रहेगा। उनके बलिदान ने खालसा पंथ की नींव को और मजबूती प्रदान कर दी। माता गुजरी जी भी महाप्रयाण कर गयीं। साहिबजादों व माता गुजरी जी के बलिदान का समाचार पाकर भी गुरु जी अविचल रहे। उन्होंने अत्याचारी मुगल शासन को समूल नष्ट करने का संकल्प किया। अत्याचारी मुगल शासक से गुरु जी सतत् संघर्षरत रहे। इसी दौरान औरंगजेब ने गुरु जी को मुलाकात का न्यौता भेजा। गुरु जी ने उसे एक जवाबी पत्र भेजा जो फारसी कविता के रूप में था। वह इतिहास में 'जफरनामा' (विजय-पत्र) के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें गुरु जी ने उसे कड़ी फटकार लगाई। गुरु जी ने लिखा—"तेरे हाथ अपने भाइयों के खून से रंगे हैं। तूने मेरे पिता को जेल भेजा व उन्हें अकारण शहीद कर डाला। मेरे बच्चों व लाखों शिष्यों के खून से भी तेरे हाथ रंगे हैं। तुझे अपने अत्याचार व शक्ति पर गर्व है। हमें अकाल पुरख पर

विश्वास है, जिसके दरबार में तुझ जैसे सैकड़ों नतमस्तक हैं।"

'जफरनामा' मिलने के बाद बीमार औरंगजेब पर इतना प्रभाव पड़ा कि उसने सूबेदारों को गुरु जी को तंग न करने का हुक्म जारी किया। सन् १७०७ में औरंगजेब की मृत्यु के कारण गुरु जी की उससे मुलाकात न हो पाई।

जीवन के अंतिम दिन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने नांदेड़ (महाराष्ट्र) में बिताये। १७०८ ई के मध्य में वे यहां आये। यहीं उन्होंने माधो दास बैरागी को बाबा बंदा सिंघ बहादर बनाकर, पंजाब जाकर अत्याचारियों से लड़ने का निर्देश दिया।

यहीं विश्राम कर रहे गुरु जी पर एक पठान ने वार कर दिया। जख्म पूरी तरह ठीक न हो सका। अंतिम समय निकट जानकर गुरु जी ने शिष्यों को शोक न करने व श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु मानने का उपदेश दिया।

१७०८ ई में गुरु जी ब्रह्मलीन हो गये। ऐसे महान युगपुरुष के समक्ष राष्ट्र नत्मस्तक है। वर्षों पूर्व की गई उनकी ऊंच-नीच विहीन समाज की कल्पना व उसे मूर्त रूप देने की आजीवन की गई कोशिश आज के परिप्रेक्ष्य में भी उतनी ही महत्वपूर्ण व प्रासंगिक है जितनी कि उस युग में थी।

खालसा पंथ के सृजक, धर्म के रक्षक, राष्ट्रीय एकात्मकता के प्रतीक, साहित्य के पोषक व सकारात्मक राष्ट्रीयवाद के प्रबल पक्षधर एवं दीन-दुखियों के मसीहा के रूप में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का नाम अमर रहेगा। उनके द्वारा प्रज्वलित की गई अखंड ज्योति प्रत्येक भारतीय के हृदय को आलोकित करती रहेगी। ■

कविता

वैसाखी पर्व

सोलह सौ निनआनवे,
वैसाखी का शुभ दिन आया।
जीवन की नई राह पर,
दशम गुरदेव जी,
खालसा पंथ सजाया।
कुर्बानी की कोख से,
उदय हुआ था खालसा।
पांच प्यारे सज गये,
स्वयं की छोड़ लालसा।
पांचों ने अपना सर्वस्व,
सब संसार अर्पित किया।
तन, मन, धन न रखा पास,
गुरदेव जी को समर्पित किया।
जिंदगी के नायक बने,
गुरदेव के सिपाही बने।
संत भी सिपहसलार भी,
गुरदेव जी के इलाही बने।
हर वर्ष जब-जब ये,
पावन पर्व वैसाखी आता है।
जीवन को नई राह की,
कुर्बानी की याद दिलाता है।
फर्जों की ज्योति जलाती है,
कुर्बानी के परचम लहराती है।
मेरी कलम वंदना करती है,
नमन-गीत भेंट चढ़ाती है।
महिमा महान गुरदेव जी की
महिमा भाती बल-बल जाती है।

■

-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तन वाली सड़क, शाला पुराना, ज़िला गुरदासपुर।

सिख धर्म की नींव पर खालसा पंथ का निर्माण

-स. हरचरण सिंघ*

१६९९ ई. वैसाखी को पंजाब के आनंदपुर साहिब में खालसा पंथ के नाम से एक नये समाज का सृजन किया गया। दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सिख धर्म का विस्तार करते हुए अपने सिखों को खालसा के रूप में स्थापित कर दिया। उस समय उनकी उम्र लगभग ३३ वर्ष की थी। खालसा पंथ का निर्माण १७वीं सदी की ऐतिहासिक घटना है। पंजाब के भू-भाग को एक नये समाज का बीज रोपने का अवसर मिला।

पंजाब को भारतीय इतिहास के कुछ सुप्रसिद्ध धार्मिक आंदोलनों को भी जन्म देने का श्रेय प्राप्त है। सिख धर्म का जन्म पंजाब में ही हुआ। इस धर्म के सभी गुरु साहिबान पंजाब भू-भाग के महान सपूत थे, जिनकी कीर्ति तथा उपदेश अल्प समय में ही भारत और अन्य देशों में तेजी से फैले।

पंजाब का भू-भाग भारतीय राजनीतिक इतिहास के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ऐतिहासिक युगों के सभी विदेशी आक्रमणकारी पंजाब के मार्ग से ही भारत में प्रवेश करते रहे। उन आक्रमणकारियों को सबसे पहले इस भू-भाग के निवासियों के साथ युद्ध करना पड़ता था, इसलिए पंजाब की धरती में वीरता व साहस, स्वाभाविक गुणों के रूप में विद्यमान हैं। भारत के इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण तथा निर्णायक युद्ध पंजाब की वीरभूमि पर ही लड़े गये थे तथा पंजाब की सरजमीं को खालसा पंथ के रूप में नये समाज के निर्माण का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। सबसे पहले पंजाब के लोगों ने वैदिक काल में हिंदू धर्म को अपनाया। कुछ समय के बाद बौद्ध या जैन धर्म का भी प्रचार हुआ। मौर्य काल तथा कुषाण काल में यहां बौद्ध धर्म का बहुत प्रचार हुआ, किन्तु गुप्त काल में फिर हिंदू धर्म वहां का मुख्य धर्म बन गया।

मध्य काल में इस्लाम धर्म का भी प्रभाव बढ़ने लगा। १५वीं सदी से सिख धर्म की उत्पत्ति सिख गुरु साहिबान के महान प्रयत्नों से हुई। सिख गुरु साहिबान के सरल उपदेशों के कारण सिख धर्म यहां का प्रमुख धर्म बनता चला गया। गुरु नानक साहिब ने अपनी पद-यात्राओं (उदासियों) के दौरान सामाजिक बुराइयों पर प्रहार करना प्रारंभ कर दिया। उपेक्षित जाति के लोग सिख धर्म से प्रभावित होते चले गये, जिसमें मूर्ति-पूजा, अंध-विश्वास, असमानता और भेद-भाव एवं कर्म-काण्डों का स्थान नहीं था। बौद्ध धर्म का यहां व्यवहारिक रूप से पतन हो चका था। वह केवल लद्दाख—पर्वतीय क्षेत्रों में ही लोकप्रिय हो सका। जैन धर्म कठोर नियम के कारण इस भू-भाग से दूर होता चला गया और सिख धर्म तेजी से बढ़ता चला गया।

वैशाख का पहला दिन था। आनंदपुर साहिब में हजारों लोगों ने एक दिन में अपने गुरु के आदेश पर खालसा पंथ को स्वीकार कर इतिहास में अपना नाम दर्ज करवाया। इतनी बड़ी संख्या में खालसा पंथ में शामिल होना अपने आप में एक मिसाल थी। यह इस बात की भी पुष्टि करता है कि जो जन-जागरण की

*मौलाना आजाद मार्ग, सेंधवा, जिला बड़वानी-४५१६६६ (मध्य प्रदेश)

ज्योति श्री गुरु नानक देव जी ने जलाई थी, आज वह नये सूत्रपात की ओर तेजी से अग्रसर होकर दुनिया को प्रकाशमान कर रही थी। खालसा पंथ का निर्माण भी सिख गुरु साहिबान के कार्यकाल का अंतिम पड़ाव था, जिस पर १ वैशाख सं. १७५६ को अंतिम मोहर लगा दी गई। श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक के २३० वर्षों में सिखों के पास अपने पृथक सामाजिक नियम कायम हो चुके थे और देखते ही देखते सिखों का विश्व में खालसा के रूप में अपना शक्तिशाली सैन्य संगठन बन गया था।

यह तो आसानी से समझ में आ जाता है कि खालसा पंथ के निर्माण में तात्कालिक वातावरण, परिस्थितियां भागीदार हो सकती हैं किंतु यह कहना तो पूरी तरह से एकपक्षीय रहेगा कि औरंगजेब की धार्मिक नीति के कारण खालसा पंथ का निर्माण किया गया था। श्री गुरु नानक देव जी ने भी अपने समकालीन मुगल शासक बाबर के बारे में बेखौफ टिप्पणी की थी। उन्होंने यहां के शासकों के बारे में पावन बाणी में यहां तक कहा कि—*"कलि काती राजे कासाई"* अर्थात कलयुग छुरी है और शासक कसाई बन गये हैं। फरमान दर्शाता है कि समाज पूरी तरह से जाति और वर्ण-व्यवस्था की गिरफ्त में था, शासक भेद-भाव की नीति की दलदल में फंसे हुए थे। श्री गुरु नानक देव जी ने सामाजिक नाबराबरी के विरुद्ध अलख जगाकर कहा:

जाति जनमु नह पूछीऐ सच घरु लेहु बताइ ॥
सा जाति सा पति है जेहे करम कमाइ ॥

(पन्ना १३३०)

श्री गुरु नानक देव जी का यही जिहाद आगे चलकर सिख धर्म का अनिवार्य अंग बन गया, जिसे खालसा पंथ के रूप में जारी रखा गया। सिख गुरु साहिबान ने सामाजिक सुधार कार्यक्रम को चरणबद्ध तरीके से आगे बढ़ाया। संगत और पंगत प्रथा शोषित वर्ग के लिए वरदान साबित होने लगी। एक ही स्थान पर गुरु साहिबान की बाणी को पढ़ना व श्रवण करना तथा एक ही पंगत में बैठकर भोजन करना जाति, वर्ण, भेद-भाव के लिए चुनौती बनता चला गया। समय-समय पर गुरु साहिबान द्वारा इन कार्यक्रमों में मसंद-प्रथा, मंजी-प्रथा तथा गुरमुखी के निर्माण के अलावा सिखों के लिए रीति-रिवाजों का भी निर्धारण किया जाने लगा। कुरीतियों के विरुद्ध अलख जगाने की भावना ने सिख धर्म की नींव को मजबूती प्रदान की। खालसा पंथ भी इन्हीं मौलिक सिद्धांतों पर आधारित था। खालसा पंथ को साकार रूप प्रदान करते समय जिन पांच व्यक्तियों को दीक्षित किया गया था वे पांचों व्यक्ति विभिन्न जातियों के थे। ये विभिन्न जातियों के व्यक्ति एक ही क्षण में सिखों के "पांच प्यारों" की पदवी पाकर सिख धर्म के सर्वोच्च प्रवक्ता बन गये।

पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी आदि ग्रंथ साहिब में अपने वरिष्ठ गुरु साहिबान की पावन बाणी के अलावा भक्तों ,भट्टों तथा गुरसिखों की पावन बाणी को सम्मिलित कर सर्व-सांझीवालता की मिसाल कायम कर चुके थे। बाद में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी में भी पांच प्यारों की सृजना को लेकर समानता का व्यवहार स्पष्ट झलकता है। खालसा पंथ में पांच प्यारों की परंपरा शुरू हो गई। व्यक्तिगत गुरु-संस्था की प्रथा समाप्त कर दी गई। सब संगत पांच प्यारों के आदेशों के आगे नतमस्तक होने लगी। स्मर्ण हो कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी भी पांच प्यारों से ही अमृत छक कर अपने नाम के आगे "सिंघ" लगाने लगे। सिखों के तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी ने सती-प्रथा का जोरदार

विरोध किया। उन्होंने इसे वर्जित करने की मांग उठाई। इस प्रथा के विरोध में आपने कहा:

सतीआ एहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंन्हि ॥
नानक सतीआ जाणीअन्हि जि बिरहे चोट मरंन्हि ॥ *(पन्ना ७८७)*

पर्दा-प्रथा का विरोध भी हुआ तथा सिख गुरु साहिबान ने धार्मिक जनजागरण के अलावा सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आगे बढ़ाया। श्री गुरु अमरदास जी ने गोइंदवाल से सन् १५५९ में वैसाखी पर्व मनाना शुरू किया। माघी तथा दीपावली त्योहारों की भी शुरुआत हुई। अपने वरिष्ठ सिख गुरु साहिबान की धार्मिक परम्पराओं में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का अटूट विश्वास था, इसलिए खालसा पंथ का जन्म भी वैसाखी पर्व के अवसर पर किया गया। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी ने सिखों में परिवर्तन की लहर को जन्म दिया। पांचवें गुरु-काल में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संकलन तथा संपादन का कार्य सम्पन्न हो चुका था। छठे गुरु जी ने अपने ३९ वर्षीय गुरु-काल में श्री अकाल तख्त साहिब की स्थापना कर राजसी सत्ता प्रारंभ कर दी। उनके द्वारा मीरी और पीरी की तलवारों को धारण किया गया। उन्होंने पगड़ी पर कलगी आदि राजसी चिन्हों का उपयोग तथा अंगरक्षकों की जमात रखना शुरू किया।

गुरुद्वारों में लंगर, कीर्तन, कवि दरबार लगने शुरू हो गए। सिख अनुयायी बड़ी संख्या में गुरुद्वारों में भाग लेने लगे तथा अपने गुरु साहिबान के सामने शीश झुकाने लगे। सिख गुरु साहिबान के बढ़ते प्रभाव, मुगल शासकों की आंखों में किरकिरी बनने लगे। मुगल शासक सिख गुरु साहिबान को समानांतर सत्ता के रूप में देखने लगे। श्री गुरु अरजन देव जी को शहीद कर दिया गया। यहीं से शुरू होती है सिख धर्म में धर्म के खातिर बलिदानी परम्परा। श्री गुरु तेग बहादर जी दिल्ली में शहीद हुए। दो छोटे साहिबजादे जिंदा नींवों में चिन दिए गए, दो बड़े साहिबजादे मुगल शासकों से लड़कर शहीद हुए किंतु, खालसा पंथ फिर भी निर्बाध रूप से आगे बढ़ता रहा।

"सैन्य संगठन" की परिकल्पना छठे गुरु जी से मिली, जिसे दसवें गुरु जी ने खालसा पंथ से नवाजा। छठे तथा दसवें गुरु में ९३ वर्षों का अंतर था। यह अंतर ९३ वर्ष बाद संत सिपाही के रूप में वैसाखी के दिन सफल हुआ।

खालसा पंथ की स्थापना केवल पंजाब के इतिहास का ही नहीं बल्कि भारत के इतिहास का भी महत्वपूर्ण दस्तावेज है, क्योंकि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बहुत सोच-विचार कर एक नये समाज की व्यवस्था स्थापित करने का संकल्प किया था। अब इस पंथ में ऐसे हरेक व्यक्ति का स्वागत था जो जाति, वर्ण-व्यवस्था त्यागकर मानव धर्म में विश्वास रखता था।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कुशल संगठनकर्ता, वीर-योद्धा, उच्च कोटि के कवि थे, जिन्होंने कायरता तथा परमात्मा में विश्वास को एक-दूसरे के प्रतिकूल बताया और उपदेश दिया कि अन्याय के आगे झुकना अधर्म है। उन्होंने सिख के हाथ में कृपाण देते हुए जो कुछ कहा वह फारसी भाषा में एक जगह लिखा है कि:

चु कार अज़ हमह हीलते दर गुज़शत ॥
हलालस्सत बुरदन ब शमशीर दसत ॥२२॥
(जफ़रनामा)

अर्थात जब सारे प्रयास विफल हो जायें तो तलवार उठा लेना ही धर्म है। उन्होंने अच्छी तरह से यह महसूस कर लिया था कि सिख गुरु साहिबान से विरासत में मिली भक्ति को अब शक्ति में बदलने का उचित अवसर आ गया है, जो जुल्म और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष कर

मनुष्य की सोई हुई आत्मा को जगा सके, जिसका जीता-जागता परिणाम खालसा पंथ के रूप में हमारे सामने आया और जो संत, सिपाही, रक्षक और प्रहरी के रूप में मानव धर्म को अंगीकार करता है, जिसमें अन्याय के अंधकार को हटाने का अदम्य साहस भी है। *"मानस की जात सबै एकै पहिचानबो"* के सिद्धांत पर गठित सिख धर्म की नींव पर खालसा पंथ की विशाल इमारत को खड़ा करके विश्व धर्म को गौरवान्वित कर रहे थे श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी।

प्रदूषण

*-कवीशर स्वर्ण सिंघ भौर**

हाय प्रदूषण! हाय प्रदूषण! कहता है जग सारा।
रोकने बदले इसको अब तो, चाहिए कोई चारा।
ऊपर चारा भीतर पारा, काम रास क्यों आते?
कूड़ा-करकट कर एकत्र, ऊंचे ढेर लगाते।
मक्खियों की भरमार हर जगह, मौत संदेशा देवे।
मौत खरीद कर अपने हाथों, फिरें लगाते टेवे।
प्रदूषण ने राजनीति में, अपनी धाक पसारी।
देश का नेता बनने को, करे बेईमान तैयारी।
पंजाबी को परे कर दिया, मौसी मां बनाई।
चाचे, ताऊ, भुआ, भूले, 'अंकल' रट लगाई।
वायुमंडल दूषित हो गया, धरा न रही सुहावी।
फैक्टरियों का गंदा पानी, होता जाए हावी।
गैस विषैली की लहरों ने, घेरा ऐसा पाया।
नई बिमारियों ने आकर, घर का द्वार खटकाया।
धरती निचले पानी में से, उठते जहर फुहारे।
पीला, काला पीलीए, आ दिखलाएं हाथ करारे।
गंगा, यमुना, गोदावरी, नदियां हुई मलीन।
गंदे पानी से लगे अलामतें, बात पे करो यकीन।
एक प्रदूषण नया ही आया, भ्रूण-हत्या कहते।
गंदे नालों, झाड़ियों में, मादा भ्रूण तसीहे सहते।
जिस भ्रूण ने बनकर नारी, देश को था चमकाना।
उसको खिलने से पूर्व है, पड़ गया कुमलाना।
कहां गये सामाजिक मूल्य, गया कहां समाज?
हुईं लड़कियां अग्नि की भेटा, कम जो लाईं दाज।
कबाड़ की तरह बूढ़े रुलते, न करते बच्चे दारी।
वृद्ध आश्रमों में समय काटते, वक्त पड़ा है भारी।
नशों का दरिया है बहता, बहती जाए जवानी।
यह प्रदूषण बहुत बुरा है, घर की हुई वीरानी।
ससुराल छोड़ मायके आ गईं, सुशील कई मुटियारें।
बुरी हालत प्रदूषण ने की, और आगे चलीं वारें।
"हैलो-हैलो" करके लोग, लेते हैं नजारे।
इसके बीच भी प्रदूषण ने, हैं कई खेल पसारे।
आसमानों में उड़ते पक्षी, कर गये जां-निसारी।
इस 'हैलो' ने कई लोगों के घर की की खुआरी।
उपयोग करो पानी संयम से, ज्यादा पेड़ लगाओ।
रंग-बिरंगे फूलों से, चौगिर्दा यह सजाओ।
शाला! यह प्रदूषण जाए, कोई न रहे बीमारी!
'भौर' फूलों से महके-टहके, यह अपनी फुलवाड़ी!

**गांव तथा डाक: सरली कलां, तहसील खडूर साहिब, जिला तरनतारन (पंजाब)। फ़ोन: ०१८५९-२१०६२२*

पांच प्यारों का अद्वितीय चयन

*-स. प्यारा सिंघ**

यह ऐतिहासिक चुनाव वैसाखी के दिन सन् १६९९ ई अर्थात "सत्तरा सए छिपंजा साल, वैसाखी सक्रांत निहाल"। (पंथ प्रकाश कृत, ज्ञानी ज्ञान सिंघ, पन्ना २३०) ज्यादा पुरानी घटना नहीं, यह महज एक संयोग है कि पांच प्यारों में अलग-अलग प्रांतों, भिन्न-भिन्न जातियों के मरजीवड़े उत्तीर्ण हुए थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की चुनाव-प्रक्रिया ही भिन्न थी। यह गुरबाणी के अनुरूप थी:

—पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ॥
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥
(पन्ना ११०२)

—जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
(पन्ना १४१२)

सन् १६९९ ई की वैसाखी के अवसर पर दशम पातशाह जी ने विशाल जनसमूह में मंच पर नंगी कृपाण लेकर आक्रोश भरे अंदाज में उपस्थित संगत से एक सिर की मांग की थी। इस चुनाव का तरीका धर्म के प्रति प्यार, निष्ठा, श्रद्धा परखने का अनोखा ही था:

पांच सीस सिक्खन के हमै।
चहीअत बली दैहूं इसस मै।
इम कहि काढ क्रिपान दिखाई।
चमकी मनो बीजरी आई।
(पंथ प्रकाश, कृत ज्ञानी ज्ञान सिंघ, पन्ना २२७)

पांच प्यारे चुनने का यह एक विचित्र ढंग था। सिर की भेंट श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रति वचनबद्धता का एक मानदंड था। वो व्यक्ति वफादार हो सकता है जो अपना सिर देने यानी मरने से संकोच न करे। खून से सनी तलवार एक हकीकत लग रही थी। यह चुनाव सिर मांग कर किया जा रहा था। भाई दया राम जी, भाई धर्म दास जी, भाई मुहकम चंद जी, भाई साहिब चंद जी और भाई हिम्मत राय जी को एक-एक करके गुरु जी तंबू के अंदर ले गये और फिर उनको अति सुंदर पोशाकों से सजाकर समूह संगत के समक्ष प्रकट किया।

यह एक विलक्षण चुनाव-विधि थी जो उन्होंने अपने श्रद्धालुओं की निष्ठा को मापने हेतु अपनाई। सिर कटता है तो जान जाती है मगर प्यार में जान देना उच्च कोटि के विश्वास की एक ध्योतक, एक तपस्या होती है। पांच प्यारों का चयन भी श्रद्धा और प्यार की उच्च कोटि की कसौटी थी:

. . . जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ ॥
(सवय्ये पा: १०)

इन पांच समर्पित प्यारों को ही सम्मान प्राप्त हुआ जिनके आगे झुक कर श्री गुरु गोबिंद राय जी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी बने। इसी लिए ही उनकी शान में लिखा जा रहा है:

वह प्रगटिओ मरद अगंमड़ा वरीआम इकेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥
(वार ४१:१७)

इस चुनाव, समर्पण और पाहुल की मिसाल कहीं नहीं मिलती। यह घटना अपने आप में एक अद्‌भुत उदाहरण है और इतिहास का एक सुनहरा अध्याय। ■

**नवनीत निवास, निकट गुरुद्वारा रानी बाजार, बीकानेर-३३४००१ (राजस्थान)*

बाबा फरीद जी की बाणी में शिष्टाचार

-कामायनी कौशिक*

मानव जीवन में शिष्टाचार का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। शिष्ट+आचार, दो शब्दों की संधि से बना यह शब्द मानव का आभूषण है। यह किसी भी धन, सौंदर्य अथवा योग्यता से अधिन मूल्यवान है। किसी भी मनुष्य की बाणी और व्यवहार में शिष्टता होना उसका श्रेष्ठतम गुण माना गया है। अपने शिष्ट आचरण के आधार पर ही कोई सभ्यता और संस्कृति गर्व करने योग्य हो सकती है। शिष्टाचार से ही एक व्यक्ति मानव बनता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जो व्यक्ति शिष्टाचार से संबंधित मानवीय गुणों को अपने व्यवहार में महत्व नहीं देता वह कभी शिष्ट नहीं बन सकता। डाक्टर जानसन ने कहा था कि "शिष्ट और अशिष्ट व्यक्ति में अन्तर यह है कि शिष्ट व्यक्ति मानवीय व्यवहार से हर व्यक्ति को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है जबकि अशिष्ट व्यक्ति अपने अमानवीय व्यवहार से अपने प्रति घृणा उत्पन्न कर लेता है।" शिष्टाचार से मानव का व्यक्तित्व आकर्षक और सुंदर बनता है। उसके आत्मिक उत्थान का मार्ग प्रशस्त होता है तथा सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है। जो व्यक्ति अपने जीवन में दूसरों के प्रति शिष्ट आचरण वाला होगा उसे सद्पुरुष और सभ्य माना जाएगा। वह सबके स्नेह और सौहार्द का पात्र बनेगा। शिष्टाचार दूसरों पर जादू जैसा प्रभाव डालता है।

संसार के लगभग सभी धार्मिक ग्रंथों में मानव को अपने व्यवहार में शिष्टता लाने का ही उपदेश दिया है; परन्तु आज व्यस्तता भरे जीवन में किसी के पास इतना समय ही कहां है जो धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन व मनन कर सके?

श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा किया गया आचरण अनुकरणीय होता है। श्रेष्ठ पुरुष जो आचरण करता है अन्य पुरुष भी उसके अनुसार ही आचरण करते हैं। वह जो प्रमाण कर देता है, लोग वैसा ही करते हैं।

शिष्टाचार हमारी सभ्यता एवं संस्कृति की मूल पहचान है, लेकिन आज हम अपनी यह पहचान खो रहे हैं। शिष्ट और सुसंस्कृत व्यक्ति ही अपनी भावी पीढ़ी को कोई आदर्श दे सकता है। हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण कार्य के कारण ही विश्व-प्रसिद्ध थी। मानव को सचरित्र बनाने के लिए उसमें नैतिक गुणों का होना बहुत जरूरी है। हमारे आध्यात्मिक ग्रंथों में नैतिक मान्यताओं को एक अमूल्य निधि के रूप में संजोकर रखा गया है। महापुरुषों ने अपने अनुभवों के आधार पर इन नैतिक मान्यताओं को निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत किया है। बाबा फरीद जी की पावन बाणी का निष्ठापूर्वक अध्ययन करने पर इस बात की पुष्टि सहज ही हो जाती है।

बाबा फरीद जी ने अपनी बाणी के माध्यम से मानव-जीवन में व्यवहार को अत्यधिक महत्व दिया है। बाबा फरीद जी जानते थे कि

*अध्यक्षा, हिंदी विभाग, केन्द्रीय विद्यालय, फरीदकोट कैंट (पंजाब)

व्यवहार से ही मनुष्य की भावनाओं का उद्‌घाटन होता है। भारतीय अध्यात्मवादियों एवं दार्शनिकों ने मानव की आचार-व्यवहार शैली को ही उसके जीवन का उचित स्वरूप माना है। मानव की सूक्ष्म वृत्तियां उसके आचरण के माध्यम से स्पष्ट परिलक्षित होती हैं। व्यवहार मनुष्य को सामाजिक होने के साथ-साथ वैयक्तिक संवेदनाओं के प्रति चेतन होने के लिए भी प्रेरित करता है। शिष्ट व्यवहार से मनुष्य सदा उन्नत एवं समृद्ध वातावरण का सृजन करने में अपनी भूमिका निभाता है जबकि अशिष्ट व्यवहार से पतनोन्मुखी एवं विध्वंसक परिवेश की ओर उन्मुख होता है। बाबा फरीद जी एक कर्त्तव्यनिष्ठ एवं नैतिक मान्यताओं से युक्त जीवन-शैली को प्राथमिकता देने वाले व्यक्ति थे। उन्होंने अपने कर्म-सिद्धांत में कर्त्तव्य को एक व्यवहारिक रूप प्रदान किया। आप जी ने अपनी सम्पूर्ण बाणी में कर्म (कर्त्तव्य) को अमल अर्थात व्यवहार या क्रियात्मक रूप में ही दर्ज किया है और अपनी बाणी में स्थान-स्थान पर मनुष्य को अच्छे अमल (कर्म) करने की प्रेरणा दी है। साथ ही इन्होंने बुरे कर्म (अमल) करने से वर्जित भी किया है। उनका कथन है कि बुरे अमल करने का परिणाम भी अन्ततः बुरा ही होता है। इसी बात को उन्होंने अपनी बाणी में सोदाहरण प्रस्तुत किया है:

फरीदा वेखु कपाहै जि थीआ जि सिरि थीआ तिलाह ॥
कमादै अरु कागदै कुंने कोइलिआह ॥
मंदे अमल करेदिआ एह सजाइ तिनाह ॥
(पन्ना १३८०)

बाबा फरीद जी ने मनुष्य को अपने व्यवहार में, अपने दैनिक जीवन में किये जाने वाले कर्मों के प्रति सुचेत किया है, क्योंकि बुरे कर्म करने से उसका व्यवहार भी अशिष्ट हो जाएगा, समाज की नजरों में उसका सम्मान कम हो जाएगा। केवल इतना ही नहीं इसका परिणाम परलोक में भी भोगना पड़ेगा। मनुष्य के अच्छे-बुरे व्यवहार (अमल) का हिसाब-किताब पाप-पुण्य के रूप में किया जाता है। जिन लोगों को इस बात का ज्ञान हो जाता है वे अशिष्ट व्यवहार नहीं करते हैं, लेकिन कुछ अज्ञानी लोग इस बात की परवाह किए बिना निरन्तर अशिष्टतापूर्ण व्यवहार करते हैं। इसका फल उन्हें अन्ततः भोगना ही पड़ता है। अतः बाबा फरीद जी चेतावनी देते हैं कि बुरे आचरण से बचना चाहिए अन्यथा इसका हिसाब दरगाह में देना पड़ेगा:

इकना नो सभ सोझी आई इकि फिरदे वेपरवाहा ॥
अमल जि कीतिआ दुनी विचि से दरगह ओगाहा ॥
(पन्ना १३८३)

बाबा फरीद जी ने मानव को अपने जीवन में सदैव शिष्टतापूर्ण आचरण (सदाचार) को अपनाने पर ही बल दिया है। उनकी बाणी के अनुसार सदाचार ही मनुष्य को सत्कर्म की ओर प्रेरित करता है। सदाचार शिष्ट मानव के आचरण की नींव है। अपने दैनिक जीवन में मनुष्य को ऐसा आचरण नहीं करना चाहिए जिससे उसे लज्जित होना पड़े। आप जी ने ऐसे व्यवहार को त्याज्य माना है जो इस लोक और परलोक में मानव को लज्जित होने को बाध्य करता है:

फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थीवही साई दै दरबारि ॥
(पन्ना १३८१)

बाबा फरीद जी ने दैनिक जीवन के व्यवहार में नम्रता को अपनाने पर बल दिया है। नम्रता से मनुष्य बड़े से बड़े अहंकारी को

भी नत्मस्तक कर सकता है। नम्रता शिष्ट आचरण का प्रथम गुण है। दूसरों के प्रति सद्भावनापूर्ण आचरण केवल नम्रता के कारण ही हो सकता है। आप जी का मानना है कि नम्रता से ही त्याग की भावना और सहन-शक्ति का बल उत्पन्न होता है। आप जी ने तो यहां तक भी कह दिया कि अगर कोई तुम्हें प्रताड़ित भी करता है तो भी उसके प्रति नम्रता का भाव ही दिखाना चाहिए। इससे आपके अन्दर शिष्टता की भावना पैदा होगी। आप जी की बाणी का एक-एक शब्द इसी नम्रता, त्याग, सहिष्णुता और शिष्टता के गुणों से ओत-प्रोत है। आप जी कहते हैं:

फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि ॥
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥
(पन्ना १३७८)

बाबा फरीद जी का जीवन-दर्शन उनके शिष्ट एवं सभ्य व्यवहार से अलंकृत है। आप जी मानव को अपने सद्व्यवहार से दूसरे मनुष्य के प्रति उसके दुर्व्यवहार की प्रतिक्रिया से बचने का सन्देश देते हैं। आप जी के अनुसार बुरे आचरण वाले व्यक्ति से बदले की भावना से सभी लोग बुरा व्यवहार ही करते हैं। 'अदले का बदला' अथवा 'सेर को सवा सेव' के सिद्धांत वाले लोग बहुत मिल जाएंगे, मगर 'बुरे का भला' चाहने वाले कोई बाबा फरीद जी जैसे विरले ही होंगे। बाबा फरीद जी ने अपने सन्तुलन को बिगाड़ने की अपेक्षा दूसरे को अपने व्यवहार से वशीभूत करने पर अधिक बल दिया है। आप जी के अनुसार बुराई करने वाले से भी सद्व्यवहार करो। सदाचार अथवा शिष्ट व्यवहार का ऐसा अद्भुत उदाहरण अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इससे क्रोध एवं द्वेष की दुर्भावना से भी बचा जा सकता है और मानसिक एवं शारीरिक रोगों का निवारण भी हो सकता है। आप जी ने दूसरों के प्रति अशिष्ट व्यवहार को नकार कर शिष्ट व्यवहार का पाठ पढ़ाया है। आप जी के अनुसार:

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हंढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥
(पन्ना १३८१)

बाबा फरीद जी ने अपने अनुभव से अर्जित मानव-व्यवहार में एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू को उद्घटित करते हुए मनुष्य को तुच्छ से तुच्छ माने जाते व्यक्ति के प्रति भी उपेक्षा का भाव न दर्शाने का संदेश दिया है। उनकी दृष्टि में जीव तो क्या कोई भी वस्तु इस संसार में तुच्छ नहीं है। सामाजिक विषमता के आधार पर हम जिन लोगों को छोटा समझ उनकी उपेक्षा करते हैं वे भी निस्संदेह समाज के महत्वपूर्ण अंग हैं, उनके बिना समाज का विकास सम्भव नहीं है। आप जी ने अपनी दूरदृष्टि से इस रहस्य को भली-भांति जान लिया था। उदारता से ही व्यक्ति दूसरों के प्रति समता और सम्मान का भाव दिखा कर समाज और देश की उन्नति में योगदान दे सकता है। खाक अर्थात् धूल का उदाहरण देकर आप जी इस तथ्य को स्पष्ट करते हैं। अगर सभी मानव इस संदेश को अपना लें तो इसी धरती पर 'वासुदेव कुटुम्बकम्' का स्वप्न साकार हो सकेगा:

फरीदा खाकु न निंदीऐ खाकू जेडु न कोइ ॥
जीवदिआ पैरा तलै मुइआ उपरि होइ ॥
(पन्ना १३७८)

मधुरभाषी होना शिष्टाचार का अन्य गुण है। मनुष्य को अपने व्यवहार में कटुता से नहीं अपितु मधुरता से पेश आना चाहिए। मधुर वचनों से क्रोध रूपी तूफान भी शान्त हो जाता है। मधुरता से बड़े-बड़े दुर्जन भी वशीभूत हो

जाते हैं। बाबा फरीद जी ने नीरस और कटु व्यवहार का निषेध कर 'सभी को अपने जैसा समझो' के सिद्धांत पर बल दिया है। कभी सोचकर देखें कि जैसा कटुतापूर्ण व्यवहार हम दूसरों से करते हैं कोई अगर हमसे भी वैसा ही व्यवहार करे तो हमको कैसा लगेगा?

इकु फिका न गालाइ सभना मै सचा धणी ॥
हिआउ न कैही ठाहि माणक सभ अमोलवे ॥
(पन्ना १३८४)

अत: कभी किसी से फीका (नीरस) मत बोलो क्योंकि सभी जीवों के हृदय में सत्यस्वरूप वह धनी ईश्वर निवास करता है। किसी के हृदय को ठेस नहीं पहुंचानी चाहिए क्योंकि सभी जीव अमूल्य माणिक हैं।

बाबा फरीद जी मनुष्य को अहं के त्याग की प्रेरणा देते हुए उसे आत्मबोध की ओर उन्मुख करते हैं। ईश्वर के दिए हुए गुणों को धारण न कर जब मनुष्य दुष्कर्मों की ओर प्रवृत्त होने लगता है तो वह अशिष्ट और दुर्जन हो जाता है, अपने को सर्वश्रेष्ठ मानने लगता है। आप जी ने ऐसे मनुष्यों को अपने गिरेवान में झांकने अर्थात अपने कुकर्मों को टटोलने का सुझाव दिया है। गिरेवान में झांकने वाले व्यक्ति की गर्दन स्वत: झुक जाती है; वह विनम्र और शालीन हो जाता है, उसे अपने अवगुणों का आभास होने लगता है, वह अपने दुष्कर्मों से स्वत: लज्जित होने लगता है। आप जी लिखते हैं:

फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेख ॥
आपनड़े गिरीवान महि सिरु नींवां करि देखु ॥
(पन्ना १३७८)

बाबा फरीद जी ने अपनी बाणी के माध्यम से मनुष्य को अपने जीवन में उस ईश्वर के प्रति नत्मस्तक होने और उसे धन्यवाद देने की प्रेरणा दी है। आप जी के अनुसार ईश्वर के आगे झुकने से, उसे नमस्कार करने से, उसकी कृपा से मनुष्यों को सत्य-मार्ग पर चलने का बल मिलता है। ईश्वर स्वयं ऐसे पुरुषों की सुध लेता है। फिर तो समझो जीवन ही सुधर गया! किसी चीज की कमी नहीं रहती। मगर अपने आप को सुधार कर सत्य-मार्ग पर चलने के लिए तैयार मनुष्य ही उस ईश्वर को पा सकता है। सत्य का मार्ग ही ईश्वर का मार्ग है। बाबा फरीद जी कहते हैं:

आपु सवारहि मै मिलहि मै मिलिआ सुखु होइ ॥
फरीदा जे तू मेरा होइ रहहि सभु जगु तेरा होइ ॥
(पन्ना १३८२)

बाबा फरीद जी की पावन बाणी के एक-एक शब्द में मनुष्य को व्यवहार के प्रति सचेत रहने का सन्देश मिलता है। आज भौतिकवाद के इस युग में हम अपने जीवन में शिष्टाचार का अभाव अनुभव कर रहे हैं; हम अपने शुद्धाचरण एवं सदाचार जीवन-शैली से विमुख होते जा रहे हैं; हम अपने आदर्शों से आंखें मूंद कर दिवास्वप्न ले रहे हैं; बच्चे बड़ों का सम्मान नहीं करते, शिक्षक अपमानित हो रहे हैं, पूरा देश भ्रष्टाचार में संलिप्त है। ऐसे परिवेश से उभरने का एक मात्र सहारा है महापुरुषों के आदर्श वाक्यों का मनन और चिन्तन। बाबा फरीद जी जैसे महानुभावों की पावन बाणी के माध्यम से उनके बताए आदर्शों का अमल करके ही हम शिष्टाचार के मार्ग पर चलकर अपने जीवन को सफल बना सकते हैं और भावी पीढ़ी को शिष्ट और सभ्य बनाने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

■

शेख फरीद जी और भक्त कबीर जी समाज व संस्कृति-दर्शन के व्याख्याकार

-डॉ. रीटा रावत*

चाहे शेख फरीद जी और भक्त कबीर जी के समय में कोई डेढ़ सौ साल का अंतर है पर साहित्यिक इतिहास की दृष्टि से दोनों का समय एक ही है। दोनों का सम्बंध उस समय भारतवर्ष में चल रही भक्ति लहर के साथ है। हां, शेख फरीद जी उस लहर के आरम्भिक काल में हुए और भक्त कबीर जी के साथ उत्तर प्रदेश में भक्ति लहर का शिखर आता है। शेख फरीद जी द्वारा इस्लाम और भक्त कबीर जी द्वारा वैष्णव सिद्धांतों की छाप गहरी हुई। शेख फरीद जी जिस इलाके में हुए और जिस तरह उनका पालन-पोषण हुआ, उसकी गहरी छाप उनकी बाणी में है। भाषा, सिद्धांत, जीवन फिलॉसफी, कविता में व्यक्तित्व और नैतिक विचारों की दृष्टि से भक्त कबीर जी का पक्ष बहुत विशाल है, दोनों में अत्यधिक आत्मविश्वास है, तर्क है और भाषा पर नियंत्रण। शेख फरीद जी उसको सिर्फ अपनी भाषा के बल पर स्वै-विश्वास के साथ बयान करते हैं। पर भक्त कबीर जी एक योद्धा की भांति सीधा पर मजबूत तर्क पेश करते हैं। वास्तव में दोनों ही हिन्दोस्तान में चल रही भक्ति लहर के १२वीं से १४वीं सदी तक के प्रतिनिधि हैं। शेख फरीद जी उसके पश्चिमी ओर की हालत को व्यक्त करते हैं और भक्त कबीर जी पूर्वी हिन्दोस्तान में उस लहर के प्रतिनिधि हैं। भक्ति लहर में भक्त कबीर जी का प्रभाव विशेष रूप से जाना जाता है।

भक्त कबीर जी आजाद तबीयत, मस्तमौला और स्पष्टवादी धर्म-जिज्ञासु पुरुष थे। भारतवर्ष के धार्मिक इतिहास में वे विशेष रूप से स्पष्टवादी हुए हैं। बहुत स्वतन्त्र स्वभाव होने के कारण उनके व्यंग्य में ज्यादा जोर है। सीधी सरल भाषा में व्यंग्य और भी असरदार हो जाता था:

गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥
ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥
कहु रे पंडित बामन कब के होए ॥
बामन कहि कहि जनमु मत खोए ॥ (पन्ना ३२४)

शेख फरीद भी प्रभु-भक्ति में मखमूर पुरुष हैं। वे दिखावे के विरोधी हैं। उनके स्वाभाव में आजादी नहीं बल्कि संयम है। भक्त कबीर जी जहां लाठी उठा लेते हैं वहां शेख फरीद जी बाहरी दिखावे का विरोध भी सूक्ष्म ढंग से करते हैं:

फरीदा कंनि मुसला सूफु गलि दिलि काती गुड़ु वाति ॥
बाहरि दिसै चानणा दिलि अंधिआरी राति ॥
(पन्ना १३८०)

भक्त कबीर जी ने उपरोक्त पंक्तियों में मानसिक मनोविज्ञान की सुन्दर झांकी तर्कपूर्ण रूप में प्रस्तुत की है। प्रत्येक व्यक्ति मकान और महलों का निर्माण कर रहा है; मरने को किसी का दिल नहीं करता। शेख फरीद जी भी इसे व्यक्त करते हैं परन्तु इसमें व्यंग्य की जगह चेतावनी दी गई है:

*लेक्चरार हिन्दी, जे. एस. जे. डिगरी कॉलेज, गुरने कलां, संगरूर (पंजाब)-१४८०३१

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ एतु न लाए चितु ॥
मिटी पई अतोलवी कोई न होसी मितु ॥
(पन्ना १३८०)

भक्त कबीर जी ने साधू और असाधू, संगत और कुसंगत पर जोरदार और बड़े विस्तार के साथ लिखा है। इन विषयों पर उन्होंने पूरे-पूरे अंग ही लिख दिए हैं, जैसे संगत कौ अंग, कुसंगत कौ अंग, साधू कौ अंग, असाधू कौ अंग आदि। इन अंगों में भक्ति और सुमिरन में संगत और साधू का महत्व तथा इसके विपरीत चलने वाले जीवों के व्यवहारों पर शोक प्रकट किया गया है। शेख फरीद जी इन दोनों विषयों पर अधिक कथन नहीं करते। वास्तव में विषयों के चुनाव का सम्बंध जीवन की घटनाओं के साथ है। श्री गुरु अरजन देव जी की भांति भक्त कबीर जी को भी उनकी जिन्दगी में बहुत तंग किया गया। भक्त कबीर जी को बनारस छोड़कर हडम्बे जाना पड़ा, शायद जिस कारण उन्होंने कुसंगत, निगुरू और असाधू लोगों के व्यवहार पर अत्यधिक रोष प्रकट किया। शेख फरीद जी के जीवन में कोई ऐसी घटना घटित नहीं हुई है, इसलिए उन्होंने अज्ञानी लोगों को समझाने के लिए स्वै-विश्लेषण ही किया है और अपने आप को ही सुमिरन, भजन और सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। शायद इसका बड़ा कारण उनका जीवन के प्रति विशेष दृष्टिकोण है। वैसे शेख फरीद जी भी भक्त कबीर जी की भांति निधड़क हैं। वे दुनियावी तौर-तरीकों की परवाह नहीं करते:

भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥
(पन्ना १३७९)

भक्त कबीर जी अपने समय की आवाज थे। जात-पात, छूत-छात, धार्मिक भावनाओं में भेद, धनी और निर्धन का प्रश्न आदि उनके सामने थे। भक्त कबीर जी ने जिस हिम्मत और निधड़कता से इनको ललकारा है, इसका अन्य उदाहरण उस समय में कम ही मिलता है। मानवीय समानता में उनका केवल विश्वास ही नहीं था बल्कि वे तो पिछड़े हुए लोगों की आवाज थे। उन्होंने किसी दोषी को नहीं छोड़ा और न ही किसी का लिहाज किया। कई स्थानों पर तो वे एक इंकलाबी का रूप धारण कर लेते हैं पर उनमें हिम्मत के साथ-साथ तर्क जरूर होता है:

जब लगु मनि बैकुंठ की आस ॥
तब लगु होइ नही चरन निवासु ॥
कहु कबीर इह कहीऐ काहि ॥
साधसंगति बैकुंठै आहि ॥ (पन्ना ३२५)

भक्त कबीर जी के मत और सिद्धांतों के तीन मुख्य पहलू हैं। उनमें से पहला खण्डन है। वास्तव में यह खण्डन निन्दा की दृष्टि से नहीं, सुधार की दृष्टि से लिया गया है। इस प्रकार के खण्डन में किसी धर्म या पंथ की निन्दा नहीं की गई है बल्कि धर्म की आड़ में किये जाने वाले कुकर्मों पर सीधी चोट की गई है। प्रत्येक को धर्म के मूल को अपनाने की शिक्षा दी गई है। इसके अलावा कुछ रुचियों, जैसे नशा, नींद, कुसंगत आदि का खण्डन किया गया है।

भक्त कबीर जी के मत का दूसरा पक्ष अपनी व्यक्तिगत उन्नति है। मनुष्य को कई प्रकार की वासनाओं और इच्छाओं ने जकड़ा हुआ है, जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आशा, तृष्णा, कपट आदि। इनका त्याग करके उसके स्थान पर क्षमा, शील, संयम और संतोष आदि अपनाने से ही आत्मिक उन्नति हो सकती है। नाम-सुमिरन, साधसंगत, ज्ञान और सद्पुरुषों का मिलाप इसके साधन हैं। भक्त कबीर जी

इनमें से हर विषय पर विस्तार से रोशनी डालते हैं, हर विषय की खुलकर व्याख्या करते हैं और भक्ति मार्ग के साधनों में उसके महत्व को बयान करते हैं।

शेख फरीद जी को भी ऊपर दिए सिद्धांतों में किसी पर भी एतराज नहीं पर उन्होंने क्रमवार इनका वर्णन किया है। वैराग्य की अवस्था में जिस किसी अंग ने उनको सताया या शायद उन्होंने किसी मनुष्य को सताए जाते हुए देखा, वहां उन्होंने स्वै-उन्नति की प्रेरणा दी और उसमें हमेशा अपने व्यक्तित्व को सामने रखा:

फरीदा जा लबु ता नेहु किआ लबु ता कूड़ा नेहु ॥
किचरु झति लघाईऐ छपरि तुटै मेहु ॥
(पन्ना १३७८)

भक्त कबीर जी का तीसरा अंग व्यवहारिक-आत्मिक या आचरण-आत्मिक है। भक्त कबीर जी अपने समय की जरूरत समझते थे जिस कारण उन्होंने धार्मिक अन्धविश्वास, भेदभाव का नाश और समदृष्टि पर जोर दिया है। सारी मनुष्य जाति को एक समान समझना, हर किसी से प्रेमभाव रखना, शांति और प्यार से रहना ही मानववाद है, जिस स्तर पर भक्त कबीर जी और शेख फरीद जी मिलते हैं:

माटी एक भेख धरि नाना ता महि ब्रहमु पछाना ॥
कहै कबीरा भिसत छोडि करि दोजक सिउ मनु माना ॥ (पन्ना ४८०)

और शेख फरीद जी भी इन सिद्धांतों से सहमत हैं:

—फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै रब माहि ॥
मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि ॥ (पन्ना १३८१)

—फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि ॥
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥
(पन्ना १३७८)

आज भी पंजाब के शहरों और कस्बों में सूर्य उदय से पूर्व जब नित्तनेमी और परमात्मा के प्यारे परमात्मा का नाम ले रहे होते हैं, कुओं पर डोल और गागरें खड़का कर रही होती हैं, घर की रानी उठकर दिये की मद्धम रोशनी में घर के कामों में व्यस्त हो जाती है और नौजवान कच्ची-पक्की नींद में अभी सुस्ता रहे होते हैं, फकीर-दरवेश प्रभात-फेरी लगाते, ऊंची आवाज में गाते हुए निकलते हैं:

फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख ॥
जिना खाधी चोपड़ी घणे सहिनिगे दुख ॥
(पन्ना १३७९)

फिर:

फरीदा किथै तैडे मापिआ जिन्ही तू जणिओहि ॥
तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजै न पतीणोहि ॥
(पन्ना १३८१)

शेख फरीद जी के श्लोक पंजाब के तकरीबन हर वासी ने सुने हैं। इनकी मिठास हर दिल में बसी हुई है। सियाने और बुजुर्ग जब कभी अपने परिवार में बैठकर अपने बाल-बच्चों को शिक्षा देते हैं तो साथ में शेख फरीद जी के श्लोकों का उच्चारण भी करते हैं। शेख फरीद जी के श्लोक हमारी जिन्दगी का हिस्सा बन गए हैं और हमारी सामाजिक चेतना का एक अंग। यह क्यों? इनकी इस महानता का क्या रहस्य है? इन श्लोकों ने कहां से अपनी मिठास और कशिश प्राप्त की? इन सवालों का जवाब ढूंढने के लिए शेख फरीद जी की बाणी का अध्ययन उसी प्यार-भाव में भीग कर करना पड़ेगा जिस प्यार-भाव में यह बाणी उच्चारण की गई है।

शेख फरीद जी के श्लोकों के फलसफों पर

कोई ज्यादा कहने की आवश्यकता नहीं है। भक्ति लहर के दूसरे भक्तों की भांति शेख फरीद जी ने भी श्लोकों में प्रभु-भक्ति अथवा चिंतन की आवश्यकता प्रकट की है, मूर्ति-पूजा, रस्मों-रिवाजों, भगवे कपड़ों, जंगलों में डेरों को झूठ बताया है।विवाह आदि अवसर पंजाब के ग्रामीण जीवन में बहुत यादगारी अवसर होते हैं। घोड़ी चढ़कर, सेहरा सजाकर दूल्हा लड़की वालों के घर आता है और शर्मीली, सजी हुई दुल्हन को अपने घर ले जाता है। एक बार जब लड़की मायके घर की दहलीज पार कर जाती है, उसके मायके घर की खुले माहौल वाली सारी बातें सदा के लिए खत्म हो जाती हैं; वो चरखा कातना, आंगन में सखियों के साथ बैठकर हंसी-मजाक करना, वो सावन के झूले, वो बहारें सब खत्म हो जाती हैं। ससुराल घर जाकर सौ मामले लड़की की अकेली जान पर आ पड़ते हैं और यदि कोई बहुत दूर ससुराल-घर बने तो घरेलू जीवन के झंझट और अभाव जैसे हमेशा के लिए लड़की को मायके-घर से अलग कर देते हैं। उसकी मुद्दतें इसी इंतजार में गुजर जाती हैं कि फिर कब बाबुल के आंगन में पैर पड़े। कौन है जिसका हृदय इस अंक्ष से न भर जाए? किस मां की आंखें एकदम नम नहीं हो जातीं? शेख फरीद जी एक अच्छे मनोविज्ञानी की भांति इस दुख भरे एहसास को, इस सामाजिक चित्त को प्रयोग करते हैं, जब वे मौत को दूल्हा कहकर और आत्मा को दुल्हन कहकर अन्त समय को याद करते हैं:

जितु दिहाड़ै धन वरी साहे लए लिखाइ ॥
मलकु जि कंनी सुणीदा मुहु देखाले आइ ॥ . .
जिंदु वहुटी मरणु वरु लै जासी परणाइ ॥
आपण हथी जोलि कै कै गलि लगै धाइ ॥
(पन्ना १३७७)

कौआ पंजाब प्रांत में एक शकुन वाला पक्षी है, जो आने वाले परदेसियों का संदेश देता है। कई नवविवाहिता स्त्रियां चूरी कूट कर कौए को देती हैं और विनती करती हैं कि कौआ आकर उनके आंगन में बोले और आने वाले प्रियतम का संदेश सुनाए। दूसरी तरफ यही कौआ मुर्दे भी खाता है। चोंच मार-मारकर गले-सड़े शरीरों से बोटियां भी नोंचता है। शेख फरीद जी ने इनमें से दूसरे चित्र को नीचे लिखे श्लोक में प्रयोग कर यादगारी बना दिया है:

कागा करंग ढंढोलिआ सगला खाइआ मासु ॥
ए दुइ नैना मति छूहउ पिर देखन की आस ॥
(पन्ना १३८२)

एक छोटा सा गांव है, पंजाब का गांव। कच्ची गलियां, सर्दी का मौसम, बरसातों के दिन। एक ऐसे गांव की तस्वीर हर पंजाबी के दिल में है और यही नक्शा हमारे सामने आ जाता है जब शेख फरीद जी कहते हैं:

फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु ॥
चला त भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु ॥
(पन्ना १३७९)

देहाती पंजाब में सामाजिक गरीबी की कई मजबूरियों के कारण कई बार यह होता है कि छोटी-छोटी लड़कियां बड़ी आयु के पुरुषों के साथ ब्याह दी जाती हैं। मालवे की युवती बड़ी आयु के 'गुलाबू' के साथ बांध दी जाती है। छोटी सी दुल्हन, बड़ी आयु का पुरुष, जीवन में इकट्ठे साथ-साथ बूढ़े होने का आनन्द प्राप्त नहीं कर सकते। इकट्ठे होते हुए भी जीवन की अलग-अलग पगडंडियों में चलने लग पड़ते हैं।

इस सामाजिक सच्चाई को शेख फरीद जी ने अपने इस श्लोक में बड़ी खूबसूरती से प्रस्तुत किया है:

फरीदा जे जाणा तिल थोड़ड़े संमलि बुकु भरी ॥
जे जाणा सहु नंढड़ा तां थोड़ा माणु करी ॥
(पन्ना १३७८)

आत्मा और परमात्मा के मामलों, जीवन-मरण के चक्करों को छोटे-छोटे घरेलू टोटकों की शक्ल में शेख फरीद जी ने बताया:

जे जाणा लडु छिजणा पीडी पाईं गंढि ॥
तै जेवडु मै नाहि को सभु जगु डिठा हंढि ॥
(पन्ना १३७८)

फिर:

कंधी उतै रुखड़ा किचरकु बंनै धीरु ॥
फरीदा कचै भांडै रखीऐ किचरु ताई नीर ॥
(पन्ना १३८२)

शेख फरीद जी के श्लोकों में पंजाब के खेतों की हरियाली है, किसानों के घरों में पली उम्मीदों की चाश्नी है, पंजाब की नहरों और नालियों की मटक है, पंजाब के खेतों से कलोलें करती हुई गुजरती हवा की ताजगी है, बरसात के मौसम में भरे सरोवरों पर बैठे बगुलों और हंसों के प्यार-खेल हैं। इन तस्वीरों के माध्यम से शेख फरीद जी ने अपने सीधे-सादे जीवन स्तर को प्रस्तुत किया है।

इसी प्रकार भक्त कबीर जी की बाणी में भी सामाजिक चेतना का अंग स्पष्ट दिखाई देता है। भक्त कबीर जी ने सकल विश्व की नानात्व मूर्तियों में एकत्वपूर्ण अद्वैत तत्व के परिव्याप्त होने की बात कही। उन्होंने जनसाधारण को सरल भाषा के माध्यम से मूल तत्व को जीते-जागते विश्व के बीच दिखाने का प्रयास किया।

भक्त कबीर जी के अनुसार अपने सभी दुखों का अन्त हमें स्वयं ही करना है। जिस प्रकार कोई व्यापारी अपने उत्तम घोड़े का संयमन करता है, उसी प्रकार हमें अपना संयमन आप ही भली-भांति करना चाहिए। जब हम सब एक ही हैं फिर यह झगड़ा, यह विरोध, यह घृणा क्यों? कौन और किससे? क्यों द्वेष करें? इस भाव से सभी नानात्व की समाप्ति हो जाती है और दुख की भी समाप्ति हो जाती है।

मिट्टी के अनेक घड़ों का रूप अलग-अलग है परन्तु वे सब एक ही मिट्टी के बने हुए हैं। टूट जाने पर मिट्टी हो जाते हैं। इसी प्रकार स्वर्ण के गहने अलग-अलग आकार तथा नाम होने तक ही विभिन्न हैं; टूट जाने पर एक स्वर्ण के रूप में ही रह जाते हैं। इसी भांति विश्व के सभी रूपों में एकत्व है और उसी एकत्व का ही यह जगत-खेल है:

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ *(पन्ना १३४९)*

भक्त कबीर जी के अनुसार उद्देश्यपूर्ण जीवन ही जीवन है। निरुद्देश्य जीवन; मोह-माया से लिप्त जीवन तो मृत्यु है, पाप है, भ्रम है। जीवनोद्देश्य की पूर्ति परमानंद की स्थिति है, मुक्तावस्था है और है अमरत्व। महानात्माओं का जीवन परहित-साधन में लगता है और उनके शरीरांत होने पर युग-युगांतर तक उनके माहात्म्य का गुणगान होता रहता है। वे अमर ही तो हो जाते हैं। उनकी प्रेरणाएं सदा-सर्वदा दूसरों को उत्साहित करती रहती हैं। यही अमर जीवन है और यही है मृत्यु पर विजय, यही है मुक्ति।

भक्त कबीर जी एक विभूति थे। भक्त कबीर जी ने समाज के सम्मुख भावी समाज का स्वरूप प्रस्तुत किया। धन के कारण समाज में जो धनी और निर्धन का वर्ग बन जाता है उसको भक्त कबीर जी ने समाप्त करने का उपदेश दिया तथा वर्ग-विहीन समाज की ओर

संकेत किया। हम सबका मूल एक है। भेद-भाव को भूलकर सबको मिलजुल कर रहना चाहिए।

इसमें कोई शक नहीं कि दोनों अपने समय की जनता में पूजनीय थे। इस बात का प्रमाण इस बात से लगाया जा सकता है कि पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने इनकी पावन बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सम्मिलित किया था। इन्होंने समकालीन जनता की रुचीयों के अनुसार उसका नेतृत्व किया, समय की नब्ज को पहचान कर समाज के खोखले प्रबन्ध को ठुकराया।

भक्त कबीर जी एकदम लोकनायक थे। भक्त कबीर जी हिन्दू-मुसलमान में कोई भेद नहीं समझते थे। धर्मी ठेकेदारों की ओर से फैलाई विभेदता पर वे तीखा व्यंग्य कसते हैं। भक्त कबीर जी में लोकनायक वाले गुण हैं। वे दुखों से डरे नहीं, समाज से घबराए नहीं, अड़ गए जूझने के लिए और फिर गजबज कह उठते हैं:

सूरा सो पहचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

शेख फरीद जी को जीवन की काफी सहूलतें प्राप्त थीं। भक्त कबीर जी को सब कुछ आप बनाना पड़ा। वे संसार से लोहा लेने के लिए तैयार हैं। भक्त कबीर जी महान लोकनायक हैं, शेख फरीद जी महान धर्म-प्रचारक।

सारांश यह है कि दोनों साधक महान हैं, दोनों फकीर हैं। बाणी-रचना दोनों का केवल साधन था, विचाराभिव्यक्ति का। दोनों की बाणियों के भाव और विचार पक्ष बहुत महान तथा गंभीर हैं। भक्त कबीर जी का फक्कड़पन ही उनका मूलधन था और अक्खड़ता उसका व्याज था। इसी से उन्होंने सबको झकझोर दिया। शेख फरीद जी भक्ति के क्षेत्र में शालीनता से काम चलाते हैं और भक्त कबीर जी भक्ति को संग्राम-स्थली समझ कर आक्रामक पद्धति को अपनाते हैं। अत: दोनों अपने-अपने क्षेत्र में महान हैं।

■

कविता

क्यों अपना देश गुलाम होता?

बाबा नानक मानवता का संदेश लेकर आया।
तथाकथित छोटे लोगों को प्रेम से गले लगाया।
एक जाति-धर्म में सबको दीक्षित किया।
मानव का उसने बड़ा उपकार किया।
छोटे-बड़े का फरक हटाया।
जात-पात का भेद मिटाया।
दूसरे सभी आपका करते अनुसरण तो,
क्यों अपना देश कमजोर होता?
क्यों अपना देश गुलाम होता?
मानव मानव हैं, इसकी अनदेखी करके,
अपने को श्रेष्ठ बताने वालों ने,
देश के आम लोगों पर घोर अत्याचार किया।
मानव को मानवता से दूर किया।
देश को जर्जर और कमजोर किया।
धर्म के नाम पर लड़वा दिया इंसान को।
अगर पूरे देश ने बाबा नानक के प्यार-संदेश को माना होता,
तो क्यों अपना देश कमजोर होता?
क्यों अपना देश गुलाम रहता?

■

-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, C/O अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)-४७०७७५

सर्व-सांझे शब्द-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

*-स. गुरबख्श सिंघ प्यासा**

संसार के अन्य धर्म-ग्रंथों की तरह श्री गुरु ग्रंथ साहिब किसी एक व्यक्ति की रचना न होकर भिन्न-भिन्न जातियों, धर्मों और प्रांतों के महापुरुषों (जो निर्गुण के उपासक थे) के वचनों (पद्य रूप में) का संकलन है। इसलिए यह ग्रंथ किसी एक धर्म अथवा संप्रदाय से संबंधित न होकर पूरी मानव जाति को सत्य का मार्ग दिखाने वाला सर्व-सांझा शब्द-गुरु है।

जहां इसमें छ: सिख गुरुओं की बाणी है, वहां तीस (३०) अन्य संतों, भक्तों और भट्टों की बाणी अपनी-अपनी छटा बिखेरती है। यदि भक्त नामदेव जी और भक्त त्रिलोचन जी महाराष्ट्र से हैं तो भक्त जैदेव जी बंगाल से, भक्त रविदास जी और भक्त सैण जी उत्तर प्रदेश से और भक्त बेणी जी बिहार से। एक और भक्त सूरदास जी हैं तो साथ में भक्त कबीर जी और सूफी फकीर बाबा फरीद जी शोभायमान हैं।

जात-पात एवं धर्म के भेद-भाव से ऊपर उठकर चिरंतन-सत्य के आलोक में एक ही अनहद नाद गूंजता है। १२वीं शताब्दी से १७वीं शताब्दी तक फैला यह आलौकिक नाद, उस निर्गुण स्वरूप परमात्मा की परिक्रमा करता हुआ अद्भुत रूप में एक ही सूत्र में बंधा हुआ है:

एको जपि एको सालाहि ॥
एकु सिमरि एको मन आहि ॥ (पन्ना २८९)

वह निर्गुण भी आप ही है और सर्गुण भी आप ही है यह दृश्य और अदृश्य भी उसी का पासारा है। वह हम सब का पिता है और हम उसके बच्चे:

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥ (पन्ना ६११)

और फिर जब हम सब एक ही नूर से पैदा हुए हैं तो भेद-भाव कैसा?

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (पन्ना १३४९)

और यदि कोई श्रेष्ठ धर्म अथवा मार्ग है तो वह है उस हरि, अल्ला, ईश्वर के नाम का सुमिरन और निर्मल कर्म। यदि कोई हिंदू है तो सच्चा हिंदू बने और मुसलमान है तो सच्चा मुसलमान बने:

—चहु वरना कउ दे उपदेसु ॥
नानक उसु पंडित कउ सदा अदेसु ॥ (पन्ना २७४)

—सो मुलां जो मन सिउ लरै ॥
गुर उपदेसि काल सिउ जुरै ॥ (पन्ना ११५९)

परंतु सबका पिता एक ही है, क्योंकि सबका मालिक एक ही है:

हिंदू तुरक का साहिबु एक ॥
कह करै मुलां कह करै सेख ॥ (पन्ना ११५८)

मनुष्य के कर्म ही उसे ऊपर उठाते हैं और कर्म ही नीचे गिराते हैं। खलक की सेवा ही खालिक की सेवा है और निष्काम सेवा द्वारा ही उसे पाया जा सकता है:

-सेवा करत होइ निहकामी ॥

** ४९, न्यू ईदगाह कालोनी, आगरा-२८२००१*

तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)
-विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥
ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥ (पन्ना २६)

यह संसार उस सत्य स्वरूप निरंकार की रचना है फिर जात-पात, धनवान-निर्धन एवं लिंग के भेद पर भेद-भाव क्यों? तिरस्कार क्यों? तभी तो यह शंख-नाद सुनाई देता है:

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ (पन्ना १५)

इसी तरह सदियों से प्रताड़ित एवं तिरस्कारित स्त्री जाति का पक्ष लेती हुई स्पष्टोक्ति है:

सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान॥ (पन्ना ४७३)

मनुष्य से धन की लिप्सा क्या-क्या पाप नहीं करवाती? यह सर्वविदित है। इसलिए मायाधारी को अंधा और बहरा कहा गया है। यदि साधन पवित्र नहीं है तो सब व्यर्थ है। तभी जीवन-यापन के लिए हक की कमाई पर ज़ोर दिया गया है और पराये हक को हिंदू के लिए गाय खाने के बराबर और मुसलमान के लिए सूअर खाने के बराबर माना गया है:

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ॥
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥ (पन्ना १४१)

ईमानदारी की किरत करके स्वयं का भी पोषण करें और जरूरतमंदों को भी दें, यही सत्य का मार्ग है। सत्य को व्यवहार में लाने का साधन है कि जीवन सहज, सरल और आडम्बर रहित हो:

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ (पन्ना १६)

इसी प्रकार यह अद्वितीय ग्रंथ वहमों, भ्रमों और पाखंडों से ऊपर उठने की प्रेरणा देता है। मन, वचन और कर्म में एकसारता हो। सच तो यह है कि मनुष्यता एक है, सच भी एक है और धर्म भी एक है, जो व्यक्तित्व का सत्य-पद तक विकास मार्ग है और साधन है सुरति को शब्द से जोड़ने का। आत्मा और परमात्मा के बीच की असत्य की दीवार कैसे टूटे? भ्रम की काई कैसे हटे? अज्ञान का अंधेरा कैसे छटे? उपाय है उसकी रजा में रहना, अपने आप को जानना :

-किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि॥ (पन्ना १)
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि॥
जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥ (पन्ना ६८४)

मनुष्य के दुखों का कारण भी यही है कि वह सृष्टिकर्ता को भूल कर संसार में लिप्त हो जाता है, दातार (देने वाले को) भूल कर दात अथवा उसके सुख में खो जाता है, तभी वह अपनी आरोग्यता को गंवाता है:

खसमु विसारि कीए रस भोग ॥
तां तनि उठि खलोए रोग ॥ (पन्ना १२५६)

सुख की आकांक्षा तो मनुष्य आदि काल से करता आया है। परंतु वास्तविक सुख प्राप्त कैसे हो? इसका उत्तर हमें निम्न पंक्तियों से प्राप्त होता है, जैसे:

चिंतत ही दीसै सभु कोइ ॥
चेतहि एकु तही सुखु होइ ॥ (पन्ना ९३२)

ईश्वर की प्रत्येक सृजना मनुष्य को विस्माद में ले जाने वाली है। रहा पाप और पुन्य, वे तो हमारे अहं की ही संतान हैं। इनसे ऊपर उठना ही सहज अवस्था प्राप्त करना अथवा स्थाई आनन्द को पाना है।

यह संसार हरि का रूप है। प्रेम ही वह

साधन है, जिसके द्वारा हम उसमें समा सकते हैं। प्रेम के रंग में रंग कर ही मनुष्य को सारा संसार उसी का स्वरूप दिखाई देने लगता है और प्रार्थना करते समय अपने आप यह भाव किसी झरने की तरह फूट पड़ता है:

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥

(पन्ना ८५३)

सत्य और प्रेम का ऐसा सरल, सहज और व्यवहारिक पथ दर्शाने वाला ग्रंथ किसी धर्म-विशेष तक सीमित रखना उचित नहीं, जो *'ना को बैरी नही बिगाना'* की दृष्टि प्रदान करता हो।

इसके सार्वदेशिक और सर्वकालिक मूल्यों को दृष्टि में रखते हुए ही सिखों के दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस सर्व-सांझे 'शब्द-सागर' को मानवता के कल्याणार्थ गुरु की उपाधि से अलंकृत करके देहधारी गुरु-प्रथा को सदैव के लिए पूर्ण विराम दे दिया जिससे भविष्य में कोई देहधारी अपने तुच्छ स्वार्थ की पूर्ति के लिए अपरिपक्व एवं भोली-भाली लोकाई को पुन: अंधकार की गर्त में न धकेल सके और आने वाली पीढ़ियां इस सर्व-सांझे ग्रंथ के द्विव्य-आलोक में अपने व्यवहारिक एवं आध्यात्मिक जीवन का सुचारू रूप से यापन करते हुए, जीवन को सार्थकता प्रदान कर सके।

इस सर्व-सांझे ग्रंथ के इन्हीं सद्‌गुणों को देखते हुए डॉ. एस. राधाकृष्णन जैसे फिलास्फरों, एच. एल. ब्राडशा जैसे धर्म-चिंतकों, ए. टायनबी जैसे इतिहासकारों, पर्ल. एस. बक जैसे नोबल पुरस्कार विजेताओं ने इसे 'सर्वकालिक रहबर' के रूप में स्वीकारते हुए अपने श्रद्धा-सुमन भेंट किये हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ३६ महापुरुषों की पावन बाणी दर्ज है। कुल शब्दों एवं श्लोकों की गिनती ५८७३ है। सम्पूर्ण बाणी ३ भागों में विभाजित है:

पहला भाग (पन्ना १ से १३)

इसमें जप (गुरु नानक साहिब), रहरासि (गुरु नानक साहिब, गुरु रामदास जी एवं गुरु अरजन देव जी) के पावन शब्द हैं।

दूसरा भाग (पन्ना १४ से १३५२)

यह भाग रागों पर आधारित है। इसमें ३१ रागों का इस्तेमाल किया गया है।

तीसरा भाग (पन्ना १३५३ से १४३०)

इस भाग में बाबा फरीद जी, भक्त कबीर जी, गुरु साहिबान के श्लोक एवं ११ भट्टों के सवैय्ये शामिल हैं अर्थात् सत् स्वरूपी के चिन्तन के १२वीं सदी से १७वीं सदी के प्रवाह को यह महत्व प्राप्त हुआ।

बाणी के रचनाकार एवं उनकी पावन बाणी का विवरण इस प्रकार है:

१. श्री गुरु नानक देव जी (१४६९-१५३९) शब्द एवं श्लोक ९७४
२. श्री गुरु अंगद देव जी (१५०४-१५५२) श्लोक ६३
३. श्री गुरु अमरदास जी (१४७९-१५७४) ९०७
४. श्री गुरु रामदास जी (१५३४-१५८१) ६७९
५. श्री गुरु अरजन देव जी(१५६३-१६०६) २२१८
६. श्री गुरु तेग बहादर जी (१६२१-१६७५) ५९ शब्द एवं ५७ श्लोक = ११६
७. भक्त कबीर जी (१३९८-१४९४) ५४१
८. भक्त त्रिलोचन जी (१३वीं सदी) ४
९. भक्त बेणी जी ३
१०. भक्त रविदास जी (१५वीं सदी) ४०
११. भक्त नामदेव जी (१३वीं सदी) ६०
१२. भक्त धन्ना जी (१५वीं सदी) ३
१३. भक्त फरीद जी (११७३-१२६६) ४ शब्द

११२ श्लोक = ११६

१४. भक्त जैदेव जी (१२वीं सदी)	२
१५. भक्त भीखन जी (१५वीं सदी)	२
१६. भक्त सैण जी (१५वीं सदी)	१
१७. भक्त पीपा जी (१५वीं सदी)	१
१८. भक्त सधना जी (१३वीं सदी)	१
१९. भक्त रामानंद जी (१४-१५वीं सदी)	१
२०. भक्त परमानंद जी	१
२१. भक्त सूरदास जी	१
२२. भाई सुंदर जी (१६वीं सदी)	६
२३. भाई सत्ता जी(१६वीं सदी)	८
२४. भाई बलवंड जी(१६वीं सदी)	८
२५. भाई मरदाना जी (१५-१६वीं सदी)	३
२६. भट्ट कलसहार जी (१६वीं सदी)	५४
२७. भट्ट जालप जी (१६वीं सदी)	५
२८. भट्ट कीरत जी (१६वीं सदी)	८
२९. भट्ट भिक्खा जी (१६वीं सदी)	२
३०. भट्ट सल जी (१६वीं सदी)	३
३१. भट्ट नल जी (१६वीं सदी)	१६
३२. भट्ट भल जी (१६वीं सदी)	१
३३. भट्ट गयंद जी (१६वीं सदी)	१३
३४. भट्ट मथरा जी (१६वीं सदी)	१४
३५. भट्ट बल जी (१६वीं सदी)	५
३६. भट्ट हरबंस जी (१६वीं सदी)	२
कुल जोड़ :	५८७३

रागों का विवरण (३१)

सिरीरागु, माझ, गउड़ी, आसा, गूजरी, देवगंधारी, बिहागड़ा, वडहंसु, सोरठि, धनासरी, जैतसरी, टोडी, बैराड़ी, तिलंग, सूही, बिलावल, गोंड, रामकली, नट नाराइण, माली गउड़ा, मारू, तुखारी, केदारा, भैरउ, बसंतु, सारग, मलार, कानड़ा, कलिआन, परभाती, जैजावंती।

रागों के प्रयोग का विवरण :

१. श्री गुरु नानक देव जी—१९ राग

२. श्री गुरु अमरदास जी—१७ राग।

३. श्री गुरु रामदास जी—३० राग।

४. श्री गुरु अरजन देव जी—३० राग।

५. श्री गुरु तेग बहादर जी—१५ राग।

६. भक्त कबीर जी एवं भक्त नामदेव जी प्रत्येक १८ राग।

७. भक्त रविदास जी—१६ राग।

बाकी संतों-महापुरुषों में से किसी ने एक और किसी ने दो रागों में अपनी बाणी रची है।

सर्व-सांझे श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ३०० वर्षीय गुरगद्दी पर्व, अक्तूबर २००८ में श्री हजूर अबिचलनगर साहिब नांदेड़ और सारे संसार में बड़ी धूम-धाम एवं श्रद्धा से मनाया जा रहा है।

जैसे-जैसे सत्य के खोजार्थी इस ज्ञान सागर में गहरे पैठ रहे हैं, अभिभूत होते जा रहे हैं और इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि वर्तमान एवं आने वाले समय में भी मानवता की डोलती नैया को संभालने एवं संसार में शान्ति लाने में यदि कोई पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभाने में सक्षम होगा तो वह श्री गुरु ग्रंथ साहिब द्वारा दिखाया सहज मार्ग अथवा गुरमति का मार्ग ही होगा।

चिंतकों एवं बुद्धिजीवियों की ही बात नहीं अब तो जनसाधारण में फैला यह भ्रम भी टूटता जा रहा है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब किसी विशेष समुदाय का गुरु अर्थात् पथ-प्रदर्शक है, क्योंकि ज्ञान अथवा आलोक का गुण-धर्म ही ऐसी भावना को नकारता है।

ੴ अर्थात् सत्य की धुरी पर टिका हुआ इसका प्रत्येक पावन श्लोक *'जो ब्रहमंडे सोई पिंडे'* के सिद्धांत को प्रतिपादित करता हुआ, उस एक और मात्र एक, जो कर्ता, भर्ता एवं हर्ता है; जो

काल से परे है, अजूनी है, निर्भय है, निरवैर है, स्वयं प्रकाशित है, जो अगम, अगाध, अथाह और अनंत है, परन्तु अनुराग के रूप में सृष्टि के कण-कण में विद्यमान है, को दृढ़ करवाता है एवं गुरु की कृपा द्वारा उसे पाया जा सकता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जिज्ञासु की आध्यात्मिक जिज्ञासा ही शांत नहीं करते, बल्कि इसके साथ-साथ उसकी सभी सांसारिक उलझनों का भी सटीक समाधान प्रस्तुत करते हैं। यह ग्रंथ धर्म को उसके सहज एवं सरल रूप में पेश करता है। चुंच ज्ञान अथवा बुद्धि विलास के स्थान पर धर्म के सही अर्थ अर्थात् जो धारण किया जा सके, को चरितार्थ करता है जिसमें मनुष्य सहज जीवन बिताते हुए जीवन-मुक्ता बन सके और यही है सच्चे धर्म की सार्थकता।

वह धर्म नहीं, जो मनुष्यों को बांटता है। धर्म तोड़ता नहीं, वह तो जोड़ता है। वह तो मनुष्य में ऐसी दृष्टि विकसित करता है जिससे उसे कुदरत के कण-कण में कादर का रूप नज़र आने लगे।

इसमें किसी संदेह की बात ही नहीं कि यदि संपूर्ण सृष्टि का 'कर्ता' एक है (जो कि एक सर्वमान्य तथ्य है) तो सारे संसार का भी एक और मात्र एक ही 'धर्म' होगा।

जब पुरातन मनीषियों ने इस निराकार (जिसे प्रभु, परमात्मा, ईश्वर, अल्लाह आदि अनगिनत नामों से पुकारा गया) को एक शब्द में परिभाषित करना चाहा, तो जो शब्द सबसे अधिक उपयुक्त था वह था 'सत्य'। इसी शब्द के आधार पर उसे सत्य स्वरूप कहा गया। इसी लिए समय-समय पर प्रत्येक रहबर ने उस सत्य को जानने से लेकर उसे पाने के लिए मनुष्य को सत्याचारी बनने का उपदेश दिया।

जब सब मनुष्य उस एक की संतान हैं तो मानव-निर्मित भेद-भाव निर्मूल हैं। यह ऊँच-नीच, जात-पात, लिंग-भेद के आधार पर घृणा, द्वेष एवं तिरस्कार उस सृष्टि-कर्ता को कैसे सुहाते होंगे? क्या हम ऐसे व्यवहार से उसकी कृपा के पात्र बन सकते हैं? फिर भी हम धर्मी होने का दंभ भरते हैं। एक ओर हम उसकी दया, कृपा, नदर, बख्शिश के आकांक्षी हैं तो दूसरी ओर उसकी सृष्टि में अपने कुकृत्यों द्वारा घृणा एवं द्वेष रूपी विष घोल रहे हैं। इतिहास साक्षी है कि धर्म के नाम पर इंसानों का जो खून बहाया गया, वह मानवता के नाम पर कभी न मिटने वाला धब्बा है।

वाह रे हमारी बुद्धि! दूसरे द्वारा दिया गया उस सृष्टि-कर्ता का नाम सुनना भी तुझे गंवारा नहीं होता। हम उस समय यह तथ्य भी भूल जाते हैं कि मनुष्य द्वारा प्रयुक्त नाम उस निराकार के गुण-वाचक नाम हैं जो उसके किसी गुण को प्रकट करते हैं। 'राम', जो संसार में रमा हुआ है, 'मौला' जिसके द्वारा संसार विकसित हुआ है। इसी प्रकार हरि, नारायण, ईश्वर, अल्लाह आदि उस निरंकार के भिन्न-भिन्न नाम हैं। हमारी सीमित बुद्धि उस असीम की कैसे थाह पा सकती है? तभी तो मनीषियों ने उसे नेति-नेति, कह कर अपनी असमर्थता जताई है।

जैसे सत्य कालातीत है, उसी प्रकार 'शब्द-गुरु' श्री गुरु ग्रंथ साहिब समय एवं स्थान के बंधन से परे हैं। अनंत-प्रवाह की तरह (३६) बाणीकारों की बाणी अपने शुद्धतम रूप में पिछले ४०० से अधिक वर्षों से सत्य के पथिकों को निरंतर पथ दिखा रही है, चाहे इस पावन ग्रंथ के रचनाकार १२वीं से १७वीं शताब्दी के बीच फैले हुए हैं। प्रांत, भाषा, धर्म अथवा

कथित जाति-भेद कहीं आड़े नहीं आता। भिन्न-भिन्न नदियों ने जैसे सागर का रूप ले लिया हो!

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में एक अद्भुत एकरूपता, एकसारता एवं एकसुरता देखने में आती है, क्योंकि सब ने अपने-अपने ढंग से उस सत्य स्वरूप निरंकार का सच्चा यशोगान किया है, सत्य और मात्र सत्य को साकार किया है। अधिकांश बाणी रागबद्ध होने के कारण कीर्तन के रूप में प्रयुक्त होने से अशांत मनों को अनूठी शीतलता प्रदान करती है। सभी रचनाकार *'इहु जगु वाड़ी मेरा प्रभु माली'* की भावना के अनुरूप मानव-कल्याण के उद्देश्य को चरितार्थ करते हैं। यदि अपने इष्ट से कुछ मांगा तो प्रभु का सुमिरन, सेवा और सरबत्त का भला मांगा, सतसंग चाहा। तभी तो यह शब्द गुरु-सार भौतिक एवं सर्वकालिक पथ-प्रदर्शक समझा जाने लगा है।

क्या ऐसे विराट शब्द-गुरु का सार कुछ टूकों में दे पाना संभव है? फिर भी कुछ टूकें देने से अपने आप को रोक नहीं पा रहा हूँ जबकि मैं भली-भांति इस तथ्य से अवगत हूँ कि ओस की कुछ बूंदों से प्यास नहीं मिटती।

सर्वप्रथम मैं श्री गुरु ग्रंथ साहिब के वंदनीय संपादक श्री गुरु अरजन देव जी की दो पंक्तियों से शुभारम्भ करना चाहूँगा। उनके पावन वचन हैं:

कहु नानक गुरि खोए भरम ॥
एको अलहु पारब्रहम ॥ *(पन्ना ८९७)*

राग रामकली में उचित इस पूरे शब्द में उस निरंकार को अल्लाह, खुदा, भगवंत, गुसाईं, जगन्नाथ, ऋषिकेष, गोपाल, गोबिंद, मुकंद, मउला, नारायण, घट-घट में रमा राम, वासुदेव आदि नामों से संबोधित किया है। इसी प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अन्य बाणीकारों ने उस अपरंपर प्रभु को हरि, बीठुल, बनवारी, परवरदिगार, साईं, पीर, पैगंबर, सतिगुरु, वाहिगुरु आदि नामों से याद कर अपनी-अपनी भक्ति-भावना व्यक्त की है, जबकि इन नामों की भिन्नता में कोई अंतर-विरोध नहीं, बल्कि इनको उस आलोक पुंज की किरणें कहा जा सकता है। प्रायः इन नामों को लोकमानस में बैठे ऐतिहासिक महापुरुषों एवं मिथहासिक चरित्रों से जोड़ने की भूल की जाती है जबकि श्री गुरु ग्रंथ साहिब निराकार की धुरी पर आधारित है अथवा लोक प्रचलित उक्ति के अनुसार ੴ (१ ओंकार) का विस्तार है।

जैसे कि शब्द 'राम' को लें जिसका प्रयोग श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अनेकों बार आया है, जिसे रमे-राम के स्थान पर अयोध्या-पति श्री रामचंद्र जी से जोड़ लिया जाता है। श्री गुरु अमरदास जी का सारंग राग में फरमान है:

जपि मन सिरी रामु ॥
राम रमत रामु ॥ सति सति रामु ॥
बोलहु भईआ सद राम रामु
रामु रवि रहिआ सरबगे ॥ *(पन्ना १२०२)*

इसी भाव को श्री गुरु तेग बहादर जी इन शब्दों में प्रकट करते हैं:

घट घट मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ॥
(पन्ना १४२७)

इसी व्यापकता के बारे में भक्त नामदेव जी का कथन है:

सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है
गोबिंद बिनु नही कोई ॥ *(पन्ना ४८५)*

संसार को दुखों की खान कहा गया है। प्रत्येक प्राणी त्रस्त है, अशांत है, जैसे कि बाबा फरीद जी का वचन है:

फरीदा मै जानिआ दुखु मुझ कू दुखु सबाइऐ जगि ॥

ऊचे चड़ि कै देखिआ तां घरि घरि एहा अगि ॥
(पन्ना १३८२)

इसलिए मनुष्य सुख की खोज में निरंतर भटकता रहता है। वह भी स्थायी सुख पर क्षणिक सुख के लिए दर-दर की ठोकरें खाता है और अपने दुखों को बढ़ाता है।

श्री गुरु नानक देव जी ने सिरी राग में मनुष्य के कुकृत्यों को इन श्ब्दों में बांधा है:

लबु कुता कूड़ु चूहड़ा ठगि खाधा मुरदारु ॥
पर निंदा पर मलु मुख सुधी अगनि क्रोधु चंडालु ॥ (पन्ना १५)

ऐसे कुकर्म करने पर भी मनुष्य सुख की आशा करता है।

मनुष्य के दुखों का असली कारण अपने प्रभु को भूल जाना है और निदान है प्रभु की शरण, संपूर्ण आत्म-उत्सर्ग।

जब खुदी मिट जाती है तो मनुष्य का तन-मन आरोग हो जाता है। जब तक मैं की भावना विद्यमान है, तू और तेरा की कल्पना भी संभव नहीं। भक्त रविदास जी के पावन वचन हैं:

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ॥
(पन्ना ६५७)

और इसके लिए कुसंग का साथ छोड़ना होगा। जैसे कि भक्त सूरदास जी अपनी एकमात्र पंक्ति में सार समझा देते हैं (यह सूरदास जी, कृष्ण-भक्त सूरदास जी नहीं, उनसे भिन्न थे):

छाडि मन हरि बिमुखन को संगु ॥
(पन्ना १२५३)

जब मनुष्य को प्रभु के नाम की रंगत चढ़ जाती है तो दुई की भावना मिट जाती है। यह तभी संभव है जब मनुष्य ईश्वर की रजा में विचरता हुआ सत्य का पल्लू थाम कर सचिआर (सत्याचारी) बन जाये। फिर तेरे-मेरे की भावना मिट जाती है, प्रभु-कृपा द्वारा दिव्य दृष्टि प्राप्त हो जाती है। तभी तो बाबा फरीद जी बंदगी अर्थात् नाम-सुमिरन की दात मांगते हैं:

तेरी पनह खुदाइ तू बखसंदगी ॥
सेख फरीदै खैरु दीजै बंदगी ॥ (पन्ना ४८८)

हरि की तरह उसका नाम भी सर्वत्र व्याप्त है जो सारी सृष्टि का आधार है। श्री गुरु अरजन देव जी ने मुंदावणी में शब्द-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जिन तीन वस्तुओं का समावेश बताया है वह है, सतु (सत्य), संतोख (सब्र) एवं प्रभु का अमृत नाम।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित अंतिम शब्द के अंतिम पद में प्रभु से उसके नाम की ही याचना की है। क्योंकि प्रभु-नाम के बिना मनुष्य का जितना व्यवहार है वह मृत शरीर के श्रृंगार के समान है:

नाम बिना जेता बिउहारु ॥
जिउ मिरतक मिथिआ सीगारु ॥ (पन्ना २४०)

और भक्त रविदास जी कलयुग का आधार नाम ही बताते हैं:

सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार॥
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार ॥
(पन्ना ३४६)

श्री गुरु नानक देव जी उन्हीं मनुष्यों का जीवन सफल मानते हैं जिन्होंने नाम की कमाई की है अर्थात नाम की अराधना की है:

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि॥
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥
(पन्ना ८)

■

एकता के प्रतीक श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

*-डॉ. मनमोहन सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी ऐसे विलक्षण धर्म ग्रंथ हैं जिनको एकता, सद्भावना, धर्मनिरपेक्षता व मानवीय समानता का प्रतीक माना गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में समस्त मानव जाति की भलाई की कामना की गयी है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दिये गये आध्यात्मिक संदेश प्राकृतिक व वैज्ञानिक दृष्टि से भी उचित हैं। दुनिया का केवल यही ग्रंथ है जिसे गुरु की पदवी प्राप्त हुई है:

बाणी गुरु गुरु है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरु निसतारे ॥ *(पन्ना ९८२)*

दुनिया में रचे गये ग्रंथों में यह पहला ग्रंथ है जो कि आम आदमी द्वारा बोली जाने वाली व समझी जाने वाली भाषा में रचा गया है। इससे पहले रचे गये ग्रंथ संस्कृत या अरबी भाषा में हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने लोगों के जीवन में सभ्याचार की भावना पैदा की। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश १७ भादों सं. १६६१ को श्री हरिमंदर साहिब श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर में किया गया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जात-पात का भेदभाव नहीं किया गया तथा किसी को नीचा या ऊंचा नहीं माना गया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में फरमान है:

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ *(पन्ना १५)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पादन करते समय केवल सिख गुरुओं की बाणी ही शामिल नहीं की गयी बल्कि अलग-अलग धर्म, जाति तथा स्थानों से संबंधित संतों, फकीरों व भक्तों की बाणी भी शामिल की गयी है। अलग-अलग संतों व भक्तों की बाणी एकत्र करके गुरु साहिब ने धर्म निरपेक्षता, एकता व सद्भावना का जो सबूत पेश किया वह और किसी ग्रंथ में नहीं मिलता।

जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पादन किया गया तो उस समय उसे पोथी साहिब कहा जाता था या आदि ग्रंथ साहिब। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्तों की बाणी किसी जाति, धर्म या क्षेत्र के आधार पर दर्ज नहीं की गयी बल्कि विचारात्मक समानता के आधार पर दर्ज की गयी है, जो एक ऊंचा मानवीय आधार है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ब्रह्म व माया का, कुदरत व कादर का शास्त्र एकतावादी व समाजशास्त्र मानवतावादी है जो संसार के मनुष्यों का आधार बनने का आदर्श पेश करता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सामाजिक भलाई तथा मानवता के सुधार के लिए अच्छे गुणों पर जोर दिया गया है। इन सदाचारी नियमों में पक्षपात वाली कोई बात नहीं। यही बताया गया है कि सद्गुणों की ही चर्चा की जाये। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सत्य पर ही जोर दिया गया है। ईश्वर की प्राप्ति के लिए जंगल में जाने की जरूरत नहीं। गृहस्थ जीवन को सबसे उत्तम

(शेष पृष्ठ ४९ पर)

**८९७, फेज १०, मोहाली-१६००६२*

बारहमाह की परंपरा एवं गुरबाणी के बारहमाह

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

'बारहमाह' की परिभाषा विभिन्न साहित्यकारों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से की है परंतु सभी का भाव यह है कि 'देसी बारह महीनों पर आधारित बाणी में बात वियोग से प्रारंभ होकर संयोग में समाप्त होती है।' 'महान कोश' के कर्ता ने बारहमाह उस काव्य को कहा है, जिसमें बारह महीनों का वर्णन हो। पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला से प्रकाशित 'साहित कोश' ने अनुसार, 'बारहमाह के शाब्दिक अर्थ हैं: साल के बारह महीने।' बारहमाह लोकगीतों की भी किस्म है। इसमें किसी वियोगण स्त्री के हर महीने में अनुभव किए गए, मानसिक दुखों और मनो-वेदनाओं का जिक्र होता है। इसमें साल के बारहमाह को क्रमश: लिया गया है। इसलिए इसको बारहमाह का नाम दिया गया है।

परंपरा : पंजाबी लोकगीतों के वर्ग में सर्वप्रथम बारहमाह १२०० ई में श्री विनय चन्द्र सूरी ने लिखा। परंतु राजनैतिक उथल-पुथल के कारण यह बारहमाह प्राप्त नहीं हो सका। अगर हम पंजाबी साहित्य की बात करें तो सर्वप्रथम बारहमाह श्री गुरु नानक देव जी द्वारा राग तुखारी में लिखा गया जो हमारे पास प्रमाणिक रूप में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित है। इसी को ही पंजाबी साहित्य में प्रथम प्रमाणिक बारहमाह होने का सम्मान प्राप्त है। यह बारहमाह की कसौटी पर पूरा उतरता है। इसमें वियोग से संयोग तक का सुन्दर चित्रण है। इसके साथ-साथ इसमें हर माह का वातावरण-परिवर्तन भी बयान किया गया है। इसका प्रभाव वियोगन स्त्री की मनोदशा पर पड़ता है।

इसके बाद दूसरा बारहमाह श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित राग माझ में मिलता है, जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित है। सिख धर्म में बारहमाह का पाठ, हर संक्रांति वाले दिन संगतों को पढ़ कर सुनाया जाता है। हर महीने विशेष में गुर-उपदेश अनुसार ही सिख धर्म में कर्म करने का सिद्धांत है।

सूफी काव्य परंपरा में पंजाबी साहित्य में सबसे प्राचीन बारहमाह अली हैदर का है। सूफी फकीर साईं बुल्ले शाह का बारहमाह भी प्रसिद्ध है। इसके अलावा सूफी कवि हाशम शाह का बारहमाह भी आता है। जनाब हाफिज बरखुरदार, स. किशन सिंघ, जनाब मुहम्मद बूटा आदि ने भी पंजाबी साहित्य में बारहमाह की रचना की है।

आधुनिक दौर में भाई वीर सिंघ (कंत महेली), ज्ञानी गुरदित्त सिंघ और प्रसिद्ध कवियत्री अमृता प्रीतम के बारहमाह भी उपलब्ध हैं।

आध्यात्मिक बारहमाह और दूसरे बारह माह में अंतर यह है कि आध्यात्मिक बारह माह में प्रभु को पति मान कर, जीव रूप स्त्री के मिलाप की तड़प को प्रकट किया गया होता है जब कि दूसरे बारहमाह में रूहानी प्यार को स्त्री-मर्द के दुनियावी संबंधों में नहीं प्रगटाया गया होता, बल्कि एक जिज्ञासु के मन में परमेश्वर/गुरु के वियोग में पैदा हुए हृदयबोधक वियोगी हावों-भावों को प्रकट किया गया होता है।

बारह माह : बारहमाह ऐसा काव्य रूप है,

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५२१*

जिसमें देसी बारह महीनों पर आधारित बात विरह से आरम्भ होकर संयोग अथवा मिलाप पर समाप्त होती है। बारहमाह में देसी बारह महीनों के ऋतु-परविर्तन अथवा प्रकृति-चित्रण को दृष्टिगोचर करके, अपने प्यारे से बिछुड़ी हुई प्रेमिका के वियोग की पीड़ा को पेश किया गया होता है। प्रथम माह में वियोग का सम्बंध कम और सावन-भादों के महीनों में यह अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाता है। बारहमाह की परंपरा के अनुसार स्थिति को सुखांत बना कर अंत में मिलन दिखा दिया जाता है। प्रेमी और प्रेमिका के मिलन से आनंद और खुशी पैदा होती है तथा सभी पूर्व संताप खत्म हो जाते हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में बारहमाह: जहां तक श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी का संबंध है, इसमें केवल दो बारहमाह संकलित हैं। जैसे कि ऊपर भी उल्लेख हो चुका है, पहला बारहमाह राग तुखारी में श्री गुरु नानक देव जी की रचना है। दूसरा, श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित बारहमाह, राग माझ में अंकित है। गुरमति में इन बारहमाह से जीव रूप स्त्री, जो अपने किये हुए कर्मों के कारण प्रभु-पति से बिछुड़ी हुई है, की प्रेम-तड़प का वर्णन है। जीवात्मा अपने मूल से बिछुड़ कर, अपने आप को अकेली महसूस करती है। वह पूजा-विधियों, कर्म-कांडों और साधनों से प्रभु- भक्ति द्वारा अपनी आत्मा शुद्धि करने की ओर लगी हुई है। बदलते हुए ऋतु-परिवर्तन, मौसम के सुहावने रंग उसकी विरहा की पीड़ा को और भी तीव्र करते हैं। सावन महीने की बरसात, काले बादल और चमकती हुई बिजलियां उसको अच्छी नहीं लगतीं। ऐसे सुहावने मौसम में वो और भी उदास हो जाती है। अकेली औरत को उत्साह देने वाला भी कोई नहीं। वो अकेली है। वो हर पल अपने प्यारे को याद करती है। उसके शरीर पर किए गए विभिन्न-प्रकारी हार-शृंगार सभी व्यर्थ हैं। वियोगन स्त्री चाहती है कि उसका प्यारा उसको तुरन्त आकर मिल पड़े। इस प्रकार इन बारहमाहों में गुरु साहिबान ने प्रकृति-चित्रण के साथ-साथ, प्रभु-पति से बिछुड़ी हुई जीव-स्त्री के मन की स्थिति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी किया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित बारहमाह का गहन अध्ययन इस बात को दृष्टिगोचर कराता है कि जीव-स्त्री प्रभु की अंश है और वो अपने किए हुए कर्मों के कारण, प्रभु से बिछुड़ी हुई है। हउमै, अहंकार और कूड़ की दीवार, दोनों में अंतर बनाए रखती है। उत्तम जीवन जीने और हर समय प्रभु-हुक्म, प्रभु-सुमिरन में रहने से, यह कूड़ की दीवार गिर जाती है और आत्मा-परमात्मा का मिलाप हो जाता है। यह मिलाप केवल गुरु-कृपा द्वारा ही हो सकता है, और कोई दूसरा रास्ता नहीं है।

बाराहमाह की महानता: सिख धर्म में बारहमाह (माझ राग) का पाठ हर महीने की संक्रांति के दिन, संगतों को पढ़ कर सुनाया जाता है। इसमें हर महीने के लिए 'गुर-उपदेश' है कि इस महीने में गुरसिख ने क्या करना है। हर महीने, हर व्यक्ति 'गुर-उपदेश' श्रवण करता है जिसका भाव यह है कि इस माह में, गुरु जी द्वारा, गुरसिख को क्या करने का उपदेश है जिसको सुन कर हम लोग उस अनुसारी जीवन व्यतीत कर सकें। वैसे बारहमाह का पाठ जब भी कोई चाहे पढ़-सुन सकता है। बारहमाह के पाठ की धार्मिक दृष्टिकोण से बड़ी महानता है।

बारहमाह माझ की साहित्यिक समीक्षा: बारहमाह (माझ) की भाषा माझे के उपक्षेत्र की ठेठ पंजाबी है। इसमें बहुत से उपक्षेत्रीय चित्रण आ गए हैं अर्थात बारहमाह की बाणी निरोल साधारण पंजाबी भाषा में है। इसको साधारण

व्यक्ति भी समझ सकता है। कई स्थानों पर दूसरी भाषाओं के कुछ शब्द भी आ गए हैं जैसे धेनु, ग्राम, शर्म, भउजल, सुआन, मजन आदि, परंतु दूसरी भाषाओं की शब्दावली एक सीमा तक ही उपयोग में लाई गई है। लोक-बोली में रची हुई होने के कारण, इसके कई पूरे पावन वाक्य कहावतों और लोक-मुहावरों जैसे, लोक-कण्ठ पर रूढ़ हो गए हैं, जैसे:

-जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥
(पन्ना १३४)

-कितिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु ॥
(पन्ना १३५)

-सचै मारगि चलदिआ उसतति करै जहानु ॥
-अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु ॥
(पन्ना १३६)

बारहमाह पावन गुरबाणी होने के कारण श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की निर्मल उपदेशात्मक पावन बाणी है। इस बाणी से गुरु जी ने मनुष्य को नेक कर्म करने, साधसंगति करने और श्वास-श्वास प्रभु-सुमिरन करने का निर्मल उपदेश किया है। जो व्यक्ति प्रभु-हुक्म में जीवन व्यतीत करते हैं, गृहस्थ जीवन में रह कर, अपने हाथों से किरत करते हैं, परोउपकारी हैं, वे व्यक्ति भले हैं। उनको जीते जी प्रभु-वियोग का संताप नहीं भोगना पड़ता। क्योंकि वे जन सदीवी प्रभु-सुमिरन को अपने हृदय में टिकाये रखते हैं इसलिए वे सदा ही सुखी रहते हैं। प्रभु-नाम ही सबसे उत्तम है, मनुष्य को इसका सुमिरन करते हुए यह अमूल्य जन्म सफल करना चाहिए। ■

एकता के प्रतीक श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी

(पृष्ठ ४६ का शेष)

माना गया है। जात-पात, रंग-रूप के आधार पर भेदभाव, ऊंच-नीच व असमानता का खंडन किया गया है। स्त्री को पुरुष से किसी भी पक्ष से कम नहीं माना गया है। दोनों हाथों की मेहनत से रोजी कमाने पर जोर दिया गया है। व उस कमाई में से किसी जरूरतमंद की सहायता करने को कहा गया है। किसी का अधिकार छीनने के विरुद्ध बहुत सख़्त फरमान अंकित है; यथा:

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥
(पन्ना १४१)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मानव की आजादी का वर्णन भी किया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अध्ययन कई विदेशी विद्वानों ने भी किया है तथा उन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की महिमा भी बखान की है। यहां तक कि रूस, जो कम्युनिस्ट देश था वहां की एक बहुत बड़ी लायब्रेरी में जहां अलग-अलग धर्मों के ग्रंथ हैं श्री गुरु ग्रंथ साहिब को सबसे ऊंचा तथा विशेष सत्कार से रखा गया है। महान लेखक डब्लयू जी आर्थव के शब्दों में, "ईश्वर का जो स्वरूप श्री गुरु ग्रंथ साहिब में चित्रित किया गया है वह अद्वितीय तथा धार्मिक विचारधारा के इतिहास में अलग तथा उत्तम है, उसमें राष्ट्रीय एकता, परम्परा व प्यार है। आपसी प्यार, विश्व-बंधुत्व बढ़ाने तथा सही मानव बनने के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी घर-घर पहुंचाने की जरूरत है, क्योंकि श्री गुरु ग्रंथ साहिब को मानने वाला किसी भी धर्म को बुरा नहीं कहता तथा किसी भी व्यक्ति से भेदभाव या वैर-विरोध नहीं करता। आदि ग्रंथ साहिब जो कि मानवीय एकता, सद्भावना व भाईचारे का प्रतीक है, को गुरु-दर्जा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने दिया:

सब सिक्खन को हुकम है गुरु मानीओ ग्रंथ। ■

इतिहास का आईना

महारानी जिंद कौर

*-डॉ. तिलकराज गोस्वामी**

इतिहास में जब कभी भारत की महान महिलाओं का उल्लेख किया जाएगा तो शेरे पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ की महारानी जिंद कौर की संपूर्ण भूमिका का वर्णन भी गौरवमय शब्दों में किया जाएगा। उन्हें पंजाबी प्यार से 'महरानी जिंदां' पुकारते देखे-सुने जा सकते हैं। अपने जीवन के अंतिम दशक में तो वे हमारे स्वाधीनता संग्राम का प्रतीक बन गई थीं। महारानी जिंदां के कार्य-कलापों को देखकर अंग्रेज रेजिडेंट हेनरी लारेंस ने कहा था कि महारानी जिंदां संपूर्ण भारत में अंग्रेजों की सबसे बड़ी कारगर शत्रु है और इससे हमें पूरी तरह सावधान रहना चाहिए। यदि उस पर कठोर अंकुश न लगाए गए तो उसके आवाहन पर किसी भी समय हमारे खिलाफ जन-विद्रोह हो जाएगा।

पंजाब पर अपना अधिपत्य स्थापित करने के लिए राजमाता जिंदां के प्रति अंग्रेजी सरकार का व्यवहार बेहद निंदनीय रहा। उन पर तरह-तरह के झूठे आरोप लगाकर उन्हें अपमानित करने की कोशिश की गई। महारानी के चरित्र के बारे में अनेक बातें फैलाने की चेष्टा की गयी। हां, महारानी का इतना ही दोष था कि वे पंजाब की जनता में अत्यधिक लोकप्रिय थीं। उनके हृदय में जबरदस्त आकांक्षा मचल रही थी कि किसी भी तरह फिरंगियों को देश से बाहर निकाला जाए, पंजाब की अखंडता की रक्षा की जाए। अपने इस उद्देश्य को पाने के लिए अवश्य ही उन्होंने अनेक प्रयास किए, अपने लोगों को संगठित किया, अपने दूतों के द्वारा देश के अन्य शासकों के पास संदेश भिजवाए।

महाराजा रणजीत सिंघ के जीवन काल में महारानी जिंदां शासन-व्यवस्था में समय-समय पर अपना सहयोग देती रहती थीं। महाराजा के निधन के कुछ समय बाद जब बालक राजकुमार दलीप सिंघ पंजाब का महाराजा हुआ तो राजमाता जिंदां उनके संरक्षक के रूप में कार्य करती रहीं। चूंकि महाराजा दलीप सिंघ अभी अबोध बालक ही था इसलिए राज्य की वास्तविक बागडोर महारानी के हाथों में ही थी। अपने पति की तरह महारानी भी पूरी तरह धर्मनिष्ठ थीं। उन्होंने अनेक बार मंदिरों, मस्जिदों व गुरुद्वारों के लिए दान दिए थे। धार्मिक व सामाजिक सभाओं में वे प्राय: अपने विचार जनता के सामने प्रस्तुत करती थीं। गरीबों व असहाय लोगों की सहायता करना वे अपना पुनीत कर्त्तव्य मानती थीं। वे अपने देश के रीति-रिवाजों व परंपराओं से भली प्रकार परिचित थीं। उनके ऐसे ही गुणों के कारण पंजाब की जनता उन्हें बहुत आदर-मान देती थी। जनता उनके आदेश पर कुछ भी करने को तैयार रहती थी।

दिनों-दिन बढ़ रही उनकी लोकप्रियता अंग्रेजों को सहन नहीं हो पा रही थी। वे तो उनकी शक्ति को एकदम कुचल देना चाहते थे। वे तरह-तरह के बहानों से उसे परेशान करने की कोशिश कर रहे थे। अंग्रेज रेजिडेंट हेनरी लारेन्स ने महारानी को पत्र में लिखा-'आप पंद्रह-बीस सरदारों से एक ही समय में मिलती हैं. . . महारानी की अपनी मर्यादा होती है। उसे कुछ नियमों के अंतर्गत ही व्यवहार करना होता है, लेकिन आप ऐसा नहीं कर रही हैं। आप खुले रूप से राजकीय शिष्टाचार तथा परंपराओं का अनादर कर रही हैं।

***'आकांक्षा', ९१-सी/८-सी, सर्वोदय नगर, भारद्वाजपुरम, इलाहाबाद-२११००६ (उ०प्र०) फोन नं: २५००३९२**

आप हर माह की प्रथम तिथि को ही दान-पुण्य किया करें, प्रतिदिन नहीं। अधिक अच्छा तो यही रहेगा कि आप राज्यों की रानियों की तरह पर्दे में ही रहा करें।'

लेकिन महारानी को इस प्रकार के उपदेशों की आवश्यकता नहीं थी। वे अच्छी तरह जानती थीं कि हजारों मील दूर से आए ये फिरंगी भारतीय महिलाओं की परंपराओं को क्या जानें? भारतीय महिला की मर्यादा क्या होती है? उसको शिक्षा देने का अधिकार इन लोगों को किसने दिया है? फिर ये हमारी व्यक्तिगत बातें हैं। वे कौन होते हैं हमारी बातों में दखल देने वाले। महारानी ने अपने पत्र में हेनरी लारेंस को लिखा—'आपके हित में यही उचित है कि आप अपने कार्य-कलापों को ही देखें, बेजा दूसरों के मामलों में दखल देने का आपको अधिकार नहीं है। जब तक महाराजा दलीप सिंघ इस राज्य का शासक है तब तक मैं उसकी सरपरस्त हूं, मैं उसकी माता हूं और मैं वैसे ही स्वतंत्र रूप में कार्य करूंगी जैसे कोई राजा करता है। मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि आपको मेरे निजी मामलों में दखल देने का अधिकार किसने दिया हैं?'

राजमाता के इस उत्तर से हेनरी लारेंस खीझ उठा। उसकी शिकायत पर कुछ समय बाद अंग्रेजी सरकार ने षड़यंत्र रचकर महारानी को लाहौर से कोई तीस मील दूर स्थित शेखूपुरा नगर के किले में नज़रबंद कर दिया। कुछ महीनों बाद राजमाता जिंदां को फिरोजपुर में नजरबंद रखने के बाद बनारस के समीप चुनार के किले में कैद कर दिया गया। गंगा नदी के तट पर निर्मित इस प्राचीन किले में उसे अनेक प्रकार से परेशान किया गया। रानी की यह दशा देखकर किले के कतिपय भारतीय रक्षकों के मन में उनके प्रति सहानुभूति उत्पन्न हो गई और आखिर एक दिन उन्हीं लोगों के सहयोग से महारानी किले से भाग निकलने में सफल हो गईं। वहां से निकल कर कुछ समय के लिए वे गुप्त रूप में इलाहाबाद में रहीं। वहां के कुछ प्रभावशाली नागरिकों तथा सैनिक अधिकारियों के संपर्क व सहयोग से वे नेपाल की राजधानी काठमांडू पहुंचने में सफल हो गईं।

अंग्रेजी सरकार को लिखे अपने पत्र में महारानी ने लिखा—'मेरे रोते-बिलखते बच्चे दलीप सिंघ को जबरदस्ती मुझसे अलग कर दिया गया। मेरी मान-मर्यादा को आघात पहुंचाकर आप लोगों ने अपने वचन को तोड़ा। मेरे केश खींचकर मुझको अपमानित किया। यदि आप में तनिक भी ईमानदारी होती, नैतिक साहस होता तो आप खुली अदालत में मुझ पर मुकद्दमा चलाते, लेकिन आपने ऐसा नहीं किया। आप लोगों को डर था कि ऐसा करने से आपके पाप संसार के सामने आ जाएंगे, आपकी कलई खुल जाएगी।'

अंग्रेजी सरकार ने किसी तरह चालाकी से महारानी को पुन: बंदी बना लिया। महारानी के हीरे-जवाहरात और आभूषण आदि तथा नौ लाख रुपये मूल्य की अन्य संपत्ति जब्त कर ली। बाद में उसे अपने पुत्र महाराजा दलीप सिंघ के पास इंग्लैंड भेज दिया गया। अंग्रेजी सरकार को यह आशंका थी कि यदि महारानी व उनके पुत्र को पंजाब अथवा भारत के किसी अन्य भाग में रहने दिया गया तो भविष्य में किसी भी समय विद्रोह होने की संभावना हो सकती है। कुछ वर्षों बाद अपने प्यारे वतन से हजारों मील दूर इंग्लैंड में महारानी का निधन हो गया। मृत्यु से कुछ समय पूर्व उसने अपने पुत्र को कहा था कि 'मेरे अवशेषों को इस देश में सड़ने के लिए न रहने देना, मेरे अवशेषों को भारत ले जाना।' महारानी की अंतिम इच्छा पूर्ण हो गई। उनके अवशेष भारत लाकर पूरे सम्मान के साथ गोदावरी नदी के जल में प्रवाहित किए गए थे।

■

आओ! धूम्रपान से देश व समाज को बचाएं

*-डॉ. श्रीमती शैल वर्मा**

धूम्रपान एक ऐसी आदत है जिसे हर व्यक्ति छोड़ना चाहता है किन्तु दलदल से निकलना कठिन काम है। इससे न पेट भरे न मुंह, कभी-कभी तो लोगों को दूसरे के आगे हाथ तक फैलाना पड़ जाता है। इसका सेवन करने वाले लोग यह भी जानते हैं कि इसका सेवन स्वास्थ्यकर नहीं होता। जो लोग इस लत को सदैव के लिये नहीं छोड़ सकते उन्हें इतना तो जान लेना चाहिये कि धूम्रपान करने से उनके शरीर के अन्दर कैसे प्रभाव पड़ते हैं। जब कोई व्यक्ति सिगरेट या बीड़ी पीता है उसमें कुछ ऐसे पदार्थ होते हैं जो उसके शरीर में प्रवेश करने लगते हैं।

इन वस्तुओं को गैसों और अन्य पदार्थों में बांटा गया है। बीड़ी और सिगरेट के अन्दर दो दर्जन गैसें होतीं हैं जिनमें सबसे खतरनाक गैस कार्बन मोनो आक्साइड है। इस गैस का सम्बंध खून से आक्सीजन ले जाने वाले होमोग्लोबीन से होता है। यह गैस खून में मिलकर सम्पूर्ण शरीर में मिल जाती है। इस तरह से आक्सीजन पहुंचने में बाधाएं उत्पन्न होने लगती हैं। कार्बन मोनो आक्साइड आक्सीजन को कार्बन डाईआक्साइड में बदल देती है जो शरीर के लिये हानिकारक होती है। आक्सीजन हमारे शरीर के लिये ऊर्जा पैदा करने का साधन होती है। इसकी कमी होने से शरीर को क्षति होने लगती है।

सिगरेट के धुएं में कुछ ऐसी हानिकारक गैसें होती हैं जो हार्ट तथा फेफड़ों पर बुरा प्रभाव डालती हैं और सांस लेने में कठिनाई होने लगती है। कई तो इसके दुष्प्रभाव से दमा जैसे घातक रोग और हार्ट अटैक के शिकार हो जाते हैं। सिगरेट के अंदर विशिष्ट तौर पर खतरनाक पदार्थ निकोटीन भी होता है। सिगरेट में जो टार पाया जाता है उसके अंदर कण इतने छोटे होते हैं कि एक घन सेंटीमीटर टार में पांच सौ करोड़ कण होते हैं जो हमारे अन्दर कैंसर की जड़ें मजबूत करने में समर्थ होते हैं।

निकोटीन तैलीय पदार्थ होता है। इसका स्वाद कड़वा और मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव डालने वाला होता है। यह मस्तिष्क तक पहुंचने में १३५ सेकण्ड का समय लेता है। इसके दुष्परिणामों को ध्यान में रख कर एक-एक व्यक्ति से अनुरोध करना चाहिये कि नशीले पदार्थों का सेवन न करें और न दूसरों को जोर दें। स्वस्थ भारत का सपना साकार करने में मदद करें, विश्व स्वास्थ्य सगंठन में छोटा सा सहयोग करें।

जन-जन में जागृति लाकर देश-भक्ति का परिचय दें। जन, समाज, देश और विश्व स्वस्थ रहे, यही कामना है, यही उद्देश्य है। अपने को छोटा नहीं आंकना चाहिये, जितनी क्षमता हो उतना तो हम कर ही सकते हैं। प्रतिदिन सम्पर्क में आए लोगों से निवेदन कर ही सकते हैं— *"नशा हटाओ, नशा छुड़ाओ।"*

■

**४८/८, सागर सदन (पुलिस चौकी के पीछे), गांधी नगर, बस्ती (उ. प्र.)-२७२००१*

गुरबाणी चिंतनधारा-१९

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

अमीक हैं ॥ रफ़ीक हैं ॥ अधंध हैं ॥ अबंध हैं ॥३६॥

हे वाहिगुरु! तू अथाह सागर है, तेरी गहराई को नापा नहीं जा सकता। तू 'रफीक' अर्थात् सबका साथी है। तू किसी प्रकार के धंधों में लिप्त नहीं है। तू संसार के बंधनों से आजाद है। हे ईश्वर! तू समस्त बंधनों-धंधों से मुक्त है। माया का कोई बंधन तुझे फंसा नहीं सकता क्योंकि माया तेरे ही अधीन है।

न्रिबूझ हैं ॥ असूझ हैं ॥ अकाल हैं ॥ अजाल हैं ॥३७॥

हे परमात्मा! तू अबूझ पहेली है। तेरे गहरे भेद कोई नहीं जान सकता। तू जीव की बुद्धि की पहुंच से परे है। क्योंकि इंसान की बुद्धि ससीम अर्थात् एक सीमा में है और हे ईश्वर! तू असीम, सीमा रहित है। असीम को ससीम बुद्धि द्वारा कैसे जाना जा सकता है? तू मौत से रहित है। माया के बंधन तुझे फंसा नहीं सकते। कारण स्पष्ट है कि माया ईश्वर की दासी है। काल उसे मार नहीं सकता तथा माया के बंधन उसे बांध नहीं सकते। भक्तों-संतों ने माया को चोरटी कहा है। भक्त कबीर जी का वचन है:

कबीर माइआ चोरटी मुसि मुसि लावै हाटि ॥
एकु कबीरा ना मुसै जिनि कीनी बारह बाट ॥
(पन्ना १३६५)

माया-ग्रस्त जीव अनेकों योनियों में भटकते रहते हैं। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है:

केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥
केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥
(पन्ना १५६)

राग आसा में गुरु पातशाह ने माया रूपी सर्पिणी के विष के वशीभूत जगत के समस्त प्राणियों को बताया है। एक घरेलू संबंध द्वारा माया के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए गुरु पातशाह के वचन हैं:

सासु बुरी घरि वासु न देवै पिर सिउ मिलण न देइ बुरी ॥ (पन्ना ३५५)

माया के प्रभाव से बचना अति कठिन है। केवल एक ईश्वर का नाम ही माया के प्रभाव से रहित है, यथा:

ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ (पन्ना ३)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भी उस अकाल पुरख को माया के प्रभाव से रहित दर्शाया है। एक परमात्मा तथा उसके नाम को ही माया के प्रभाव से परे बताया गया है, सृष्टि के शेष समस्त जीव माया के प्रभाव के अधीन हैं।

अलाह हैं ॥ अजाह हैं ॥ अनंत हैं ॥ महंत हैं ॥३८॥

हे परमात्मा! तू अलाह अर्थात् अलभ है अर्थात् तुझे कहीं ढूंढा नहीं जा सकता। कारण भी स्पष्ट है क्योंकि हे ईश्वर! तेरा कोई विशेष ठिकाना नहीं है। तू तो कण-कण में विद्यमान है। श्री गुरु तेग बहादर जी का पावन फरमान है:

घट घट मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ॥
(पन्ना १४२७)

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४*

अक्सर एक भ्रम में दुनिया के लगभग सब प्राणी हैं। हम सब उस ईश्वर को किसी विशेष स्थान पर ढूंढने का प्रयत्न करते हैं। मुख्यतया तीर्थ-स्थानों, गुफाओं, पर्वतों की चोटियों पर या किसी एकांत में उसे खोजने का यत्न करते हैं। चिन्तनशील पुरुष उसे सर्वत्र देखते हैं और वे दूसरों का भी मार्गदर्शन करते हुए कह उठते हैं:

फरीदा जंगलु जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोड़ेहि ॥
वसी रबु हिआलीऐ जंगलु किआ ढूढेहि ॥ (पन्ना १३७८)

इस बंद में गुरु पातशाह फरमान करते हैं, हे प्रभु! तू बेअंत है। तेरा अंत नहीं पाया जा सकता क्योंकि तू अनंत है। तू सबसे बड़ा है।

निष्कर्षत: उस ईश्वर का कोई विशेष ठिकाना नहीं है वह सर्वत्र में विद्यमान है, वह बेअंत तथा सर्वोपरि है।

अलीक हैं ॥ न्रिस्रीक हैं ॥
न्रिलंभ हैं ॥ असंभ हैं ॥३९॥

हे ईश्वर! तू अलीक है अर्थात् जिसकी सीमा की कोई रेखा न खींची जा सके। कहने का अभिप्राय, उसका अंतिम छोर बताने की किसी में समर्थता नहीं है, जैसा कि भाई गुरदास जी का कथन है:

ओड़िकु मूलि न लभई सभे होइ फिरनि हैराणै ।
(वार ७:१८)

वह परमात्मा हद से परे है, बेहद है। उसकी हद जानने में तो कोई तभी समर्थ हो सकता है यदि वह उस हद तक पहुंच सके, यथा:

एवडु ऊचा होवै कोइ ॥
तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ ॥ (पन्ना ५)

गुरु पातशाह का फ़रमान है कि उसका कोई शरीक नहीं है। कोई ईश्वर के साथ शराकत (हिस्सेदारी) नहीं कर सकता। उस परमात्मा के न्रिसरीक रूप को एक शायर के मनोभावों द्वारा समझने का यत्न करें। परमात्मा और जीवात्मा के मध्य हुए वार्तालाप का जिक्र एक शायर ने इस प्रकार किया है:

कहा मैंने इक रोज, ऐ मेरी जां!
मेरे और कुल आलम के रूहे-रवां!
जी में यह हसरत है ऐ दिलरुबा!
मेरे घर मेहमान बन के तू आ।
प्रभु ने यह सुनकर कहा बस कि हाँ।
मगर है तेरे पास कोई मकां। (मकान)
जहां मुझको ले जाकर बिठलाएगा।
और उस जगह पे फिर नहीं कोई आएगा?
कहा मैंने है खानाए दिल मेरा।
उसी में रहता हूं मैं भी सदा।
खुदा ने कहा, यह नहीं बात ठीक।
मेरा नाम है वहिदे-ला-शरीक।
शराकत की मुझ में रसाई नहीं।
तेरी दावत मुझ को भायी नहीं।
अगर है मेरी खाहिश, ऐ खुश-खसाल!
खुदी खाना दिल से तू बाहर निकाल।
फिर उसमें ही देखे तू मुझको सदा।
बका ही रहे फिर न आये फ़ना।

कहने का अभिप्राय, जब कोई हृदय से 'मैं-मेरी' निकाल देता है तब सर्वत्र में ईश्वर का दीदार करता है। गुरदेव आगे फरमान करते हैं कि उस मालिक को किसी के सहारे की आवश्यकता नहीं है क्योंकि ईश्वर निराश्रित है और इंसानी सोच से परे है। वह किसी के सोच-मंडल में नहीं समा सकता।

अगंम हैं ॥ अजंम हैं ॥ अभूत हैं ॥ अछूत हैं ॥४०॥

हे अकाल पुरख! तू इंसानी पहुंच से परे है। तू जन्म में नहीं आता। तू पांच भौतिक तत्वों से निर्मित नहीं है अर्थात् पांच तत्वों से तेरी रचना नहीं हुई। संसार के समस्त प्राणियों की रचना पांच भौतिक तत्वों से हुई है। हे ईश्वर! तू इन पांच भौतिक तत्वों से रहित है।

तुझे पांच भौतिक तत्वों से निर्मित जीव छू नहीं सकते।

अलोक हैं ॥ असोक हैं ॥ अकरम हैं ॥ अभरम हैं ॥४१॥

हे वाहिगुरु! तू इन नेत्रों से दिखाई नहीं देता। तुझे देखने हेतु ज्ञान रूपी नेत्रों की आवश्यकता होती है जैसा कि गुरबाणी का फरमान है:

नानक से अखड़ीआ बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी ॥ (पन्ना ११००)

वास्तव में वे तो अनुभव की आँखें हैं, जिनके द्वारा एहसास हो सकता है कि वह इन्द्रियों की पहुँच से परे है, यथा:

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥
(पन्ना १३९)

गुरदेव आगे फरमान करते हैं कि हे ईश्वर! तू असोक अर्थात् शोक से रहित है। तुझे कोई चिंता नहीं सता सकती। तू कर्मों के बंधनों से रहित है। तेरी प्राप्ति किसी भी तरह के धार्मिक क्रिया-कलापों द्वारा मुमकिन नहीं है क्योंकि तू कर्म-बंधनों से मुक्त है। तू भ्रम-भुलेखों से परे है। तू संसारी जीवों की तरह भ्रम-जाल में नहीं फंसता।

अजीत हैं ॥ अभीत हैं ॥ अबाह हैं ॥ अगाह हैं ॥४२॥

हे ईश्वर! तुझे कोई जीत नहीं सकता। तुझ पर विजय पाना नामुमकिन है। तू भय से रहित है। तुझे किसी का भी डर नहीं है। मूलमंत्र में भी आपके भयरहित स्वरूप को श्री गुरु नानक देव जी ने 'निरभउ' कहकर प्रतिपादित किया है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'अभीत' शब्द द्वारा ईश्वर के निडर स्वरूप को प्रतिपादित किया है। गुरु जी फरमान कर रहे हैं कि तू एक ऐसा पर्वत है जिसे हिलाया नहीं जा सकता। तू अटल शक्ति है जिसे कोई हिला नहीं सकता। तू सागर जैसा गहरा है जिसे नापने का कोई पैमाना नहीं है। तेरे विस्तार तथा तेरी गहराई को कोई नहीं जान सकता, यथा:

वडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा ॥
कोइ न जाणै तेरा केता केवडु चीरा ॥ (पन्ना ९)

अमान हैं ॥ निधान हैं ॥ अनेक हैं ॥ फिरि एक हैं ॥४३॥

हे वाहिगुरु! तेरा कोई मापतोल नहीं है, दुनिया का कोई भी पैमाना तेरा अंदाजा नहीं लगा सकता। तू समस्त गुणों एवं पदार्थों का खजाना है। तू अनेक रूपों वाला है अर्थात् तूने अपने एक स्वरूप से अनंत रूप बनाए हुए हैं, यथा:

सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ सहस मूरति नना एक तोही ॥ . . .
सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥
(पन्ना १३)

अनेक रूपों वाला होते हुए भी तू एक रूप है, यथा:

आपन खेलु आपि करि देखै ॥
खेलु संकोचै तउ नानक एकै ॥ (पन्ना २९२)

तू अलबेला है, अनोखा है। तेरे जैसा कोई नहीं। हे ईश्वर! तू सब में समाया हुआ है फिर भी सबसे निर्लेप है। वस्तुत: तेरे जैसा कोई नहीं।

भुजंग प्रयात छंद ॥
नमो सरब माने ॥ समसती निधाने ॥
नमो देव देवे ॥ अभेखी अभेवे ॥४४॥

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

गुरबाणी राग परिचय-८

रागु सोरठि (सोरठि सदा सुहावणी)

*-स. कुलदीप सिंघ**

गुरबाणी राग परिचय के इस कालम में पाठक अब तक आसा राग तक के विचार प्रवाह से अवगत होने का लाभ ले चुके हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित पावन बाणी के रागों के क्रम में किसी विशेष कारण से हम गूजरी, देवगंधारी, बिहागड़ा और वडहंस रागों संबंधी विचार प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं हो सके। इन रागों के बारे में जानकारी हम आगामी अंकों में प्रकाशित करेंगे।

-संपादक।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पूर्वार्द्ध में सिरीरागु से लेकर राग बैराड़ी तक कुल १३ राग हैं। इन १३ रागों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है। प्रथम वर्ग में आठ राग हैं जिनका अन्तिम राग वडहंस है। दूसरे वर्ग का आरंभ राग सोरठि से होता है। इस वर्ग के राग हैं सोरठि, धनासरी, जैतसरी, टोडी तथा बैराड़ी। इन रागों की कुल पृष्ठ-संख्या १२६ है, जो राग आसा की बाणी के विस्तार से भी कम है। रागों की बाणी का विस्तार क्रमश: कम होता गया है। राग सोरठि, धनासरी तथा टोडी का आरम्भ गुरु-मन्त्र के पूर्ण रूप में किया गया है। राग जैतसरी को राग धनासरी के बाद तथा राग बैराड़ी को राग टोडी के बाद गुरु-मन्त्र के संक्षिप्त रूप के साथ आरंभ किया गया है।

गुरमति के अनुसार सोरठि मेघ राग की रागिनी है। इसके आरोह के स्वर हैं 'सा रे मा पा नी सा' तथा अवरोह के स्वर हैं 'सा नी धा पा पा गा रे सा'। सोरठि का तत्सम शब्द सौराष्ट्र है जिसका स्थानीय नाम काठियावाड़ है। सौराष्ट्र प्रदेश की लोक-गाथा के अनुसार वहां के राजा राय दयाच ने बीजल नाम के संगीतज्ञ की आध्यात्मिक तान से विभोर होकर अपना शीश उसे अर्पित कर दिया था। राग सोरठि में साधक के द्वारा गुरु के लिए त्याग का वर्णन कई बार आया है।

राग सोरठि में शब्दों की कुल संख्या १३९ है। श्री गुरु नानक देव जी के १२ शब्द ठेठ पंजाबी भाषा में रचित हैं। दूसरे शब्द की समास शैली में व्यापार, खेती तथा सेवा के तीनों क्षेत्रों में माया के बंधन से मुक्त हो, जीवन-निर्वाह का उपदेश दिया गया है—अगर खेती करनी है तो मन को कृषक (हल चलाने वाला) बनाओ। शरीर खेत है, श्रम पानी है। इस शरीर रूपी खेत में नाम का बीज बोना चाहिए तथा सन्तोष के पटेला से समतल करना चाहिए। नम्रता से गरीबी वेष में रहना चाहिए। प्रभु की कृपा और प्रभु के प्रेम से यह बीज जहां उगेगा वह घर भाग्यशाली होगा:

मनु हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु ॥
नामु बीजु संतोखु सुहागा रखु गरीबी वेसु ॥
भाउ करम करि जंमसी से घर भागठ देखु ॥
(पन्ना ५९५)

खेती के प्रतीकों के माध्यम से उपदेश को

**सी-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६*

बोधगम्य बनाना श्री गुरु नानक देव जी की बाणी की विशेषता है। उनकी इस शैली का अनुसरण कश्मीर के श्रद्धावान कवि परमानन्द ने कर्मभूमि कविता में किया है और खेती की विविध क्रियाओं को आधार बना कर २१ त्रिपदी छन्दों में नैतिक गुणों को धारण करने का उपदेश दिया है।

राग सोरठि के शब्दों में श्री गुरु नानक देव जी के दार्शनिक चिन्तन की झांकी मिलती है। प्रभु के निर्गुण स्वरूप का वर्णन शब्द ६ में किया गया है। सत्य-साधना से प्रभु के स्वरूप का पता चलता है—उसका न रंग है, न रूप है, न कोई चिन्ह है; वह सत्य स्वरूप है, मैं उस प्रभु पर बलिहार जाता हूं:

साचे सचिआर विटहु कुरबाणु ॥
ना तिसु रूप वरनु नही रेखिआ साचै सबदि नीसाणु ॥ *(पन्ना ५९७)*

माया रहित प्रभु की ज्योति सब में समाई हुई है। प्रभु अपने कर्मों में स्वतन्त्र है। वह प्रकृति की रचना करके उसको अपने आदेश अनुसार चलाता है। परमात्मा के द्वारा सब जीवों के मस्तक पर पूर्व-कृत कर्मों के अनुसार जीवन के आरंभ से ही संस्कार लिख दिये हैं। प्रभु की रजा में ही जीव का आचरण होता है:

सरब जीआ सिरि लेखु धुराहू बिनु लेखै नही कोई जीउ ॥
आपि अलेखु कुदरति करि देखै हुकमि चलाए सोई जीउ ॥ *(पन्ना ५९८)*

श्री गुरु अमरदास जी के १२ शब्दों में प्रत्येक शब्द में गुरु के शब्द द्वारा हरि-प्राप्ति, सुख, मुक्ति, आत्मिक ज्ञान-प्राप्ति का वर्णन किया गया है। श्री गुरु रामदास जी के ९ शब्दों में प्रथम ६ शब्द विशेष शैली में रचित हैं। इसका एक उदाहरण श्री गुरु नानक देव जी का सिरीरागु के शब्द में अंकित है:

आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु ॥
(पन्ना २३)

राग सोरठि में सर्वव्यापक प्रभु के विविध रूपों का वर्णन इस शैली में किया गया है। सृष्टि-रचना का वर्णन द्वितीय शब्द में है—प्रभु आप ही धागा है, आप ही अनगिनत मनके है। वह अपनी शक्ति से जगत को धागे में पिरोता है। जब वह धागे को खींच लेता है तब जगत में प्रलय होती है:

आपे सूतु आपे बहु मणीआ करि सकती जगतु परोइ ॥
आपे ही सूतधारु है पिआरा सूतु खिंचे ढहि ढेरी होइ ॥ *(पन्ना ६०४-०५)*

सृष्टि-रचना का एक दूसरा चित्र शब्द चार में है—प्रभु स्वयं ही तराजू है। उस तराजू का बांट भी वह स्वयं है। प्रभु ने आप ही उन बांटों की मर्यादा निर्धारित की है। वह स्वयं ही साहूकार है, आप ही व्यपारी है और आप ही व्यापार करने वाला है।

राग सोरठि में श्री गुरु अरजन देव जी के विभिन्न ऊंचे रसों से युक्त शैली में रचित ९४ शब्द हैं। संत-महिमा सम्बंधी दो शब्द विशेष हैं। संतों के समान परमात्मा के नाम की देन देने वाला अन्य कोई नहीं है; जैसे-*"संतन बिनु अवरु न दाता बीआ ॥"* तथा हे प्रभु! तुम्हारे संत-जनों से मेरी प्रीति हो गई है-*"हम संतन सिउ बणि आई ॥'* मानव भ्रातृ-भावना सम्बंधी शब्द *"एकु पिता एकस के हम बारिक"* अपने सन्देश की गरिमा के कारण सर्वप्रिय है। श्री गुरु अरजन देव जी की अनूठी बाणी का उदाहरण गुरु की कृपा से आत्मिक शुद्धता और आनंद-प्राप्ति सम्बंधी है:

गुरि पूरै किरपा धारी ॥ प्रभि पूरी लोच हमारी ॥

करि इसनानु ग्रिहि आए ॥ अनद मंगल सुख पाए ॥
(पन्ना ६२१)

रागु सोरठि में श्री गुरु तेग बहादर जी के १२ शब्द अंकित हैं। दो शब्दों में प्रश्नोत्तर के रूप में प्रभु-भक्ति-प्राप्ति अथवा प्रभु-प्राप्ति का मार्ग दर्शाया गया है:

-प्रानी कउनु उपाउ करै ॥
जा ते भगति राम की पावै जम को त्रासु हरै ॥
(पन्ना ६३२)

-माई मै किहि बिधि लखउ गुसाई ॥
महा मोह अगिआनि तिमिरि मो मनु रहिओ उरझाई ॥ *(पन्ना ६३२)*

अज्ञान-तिमिर में फंसे मन का उद्‌बोधन कई रूपों में किया गया है, जैसे हे मन! तूने किससे कुमति ली है। हे मां! मेरा मन वश में नहीं है। मैं इसे किस प्रकार रोकूं? हे मन! तुमने गुरु का उपदेश नहीं लिया। हे मन! प्रभु की शरण का स्मरण करो। हे मन! राम (प्रभु) से प्रीति कर। श्री गुरु तेग बहादर जी ने अन्तिम शब्द में क्षणभंगुर संसार के स्वार्थपूर्ण व्यवहार का वर्णन किया है तथा उससे पूर्व वैराग्य और विवेक प्राप्त मनुष्य के लक्षणों का स्वरूप दर्शाया है। विवेकपूर्ण मनुष्य सुख-दुख में, स्नेह और भय में, कंचन और मिट्टी में समरस रहता है, उसे निन्दा, स्तुति, लोभ, मोह, अभिमान का स्पर्श नहीं होता। आशा और अभिलाषा से रहित वह संसार से निर्लिप्त रहता है। उसे काम, क्रोध स्पर्श नहीं करते। उसके हृदय में ब्रह्म का निवास होता है। इस प्रकार जीवन जीने की युक्ति उसी व्यक्ति की पहचान में आती है जिस पर गुरु की कृपा होती है। वह मनुष्य प्रभु में इस प्रकार लीन हो जाता है जैसे पानी में पानी मिल जाता है।

राग सोरठि की असटपदियों में भी गुरु-महिमा का वर्णन है। प्रभु से मिलन के अन्य सभी उपाय व्यर्थ हैं। विवेक, बुद्धि प्रभु की शरण से प्राप्त होती है। सभी कर्मों का सिरमौर हरि-कीर्तन है। यह उसे प्राप्त होता है जिसके भाग्य में प्रभु ने लिख दिया हो:

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति जिसु पुरब लिखे का लहना ॥ *(पन्ना ६४२)*

राग सोरठि की वार श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित है। वार के आरम्भिक श्लोक में श्री गुरु नानक देव जी ने जीवात्मा की तुलना सोरिठ रागिनी से की है। सत्य-स्वरूप प्रभु में मन स्थिर होने पर ही सोरठि रागिनी सदा सुन्दर लगती है। दिखावे को त्याग कर वह प्रभु-पति में अनुरत रहती है। इस वार में २९ पउड़ी छंद हैं। पउड़ी २८ में श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित श्लोक में *"सरब जीआ सिरि लेखु धुराहू"* शब्द के विचार को दोहराया गया है। प्रभु के हुक्मानुसार लिखा कर्म भोगना पड़ता है-*"ता की रजाइ लेखिआ पाइ . . . ॥"* श्री गुरु नानक देव जी ने मानव-जीवन की नियति को समास शैली में परिभाषित किया है। मनुष्य के कर्मों की गति का निर्धारण उसके द्वारा पूर्वकृत कर्मों के संस्कार से होता है और उसकी दिशा का नियन्त्रण प्रभु के द्वारा होता है। प्रभु का आदेश मानव की नाक में नकेल के रूप में है। यथार्थ सत्य यह है कि जहां मानव का दाना-पानी होता है वह वहीं पहुंच कर उसे ग्रहण करता है:

नकि नथ खसम हथ किरतु धके दे ॥
जहा दाणे तहां खाणे नानका सचु हे ॥
(पन्ना ६५३)

राग सोरठि की भक्त बाणी में भक्त कबीर जी, भक्त नामदेव जी, भक्त रविदास जी तथा भक्त भीखन जी के शब्द संकलित हैं। भक्त कबीर जी के चौपाई शैली में तीन पदों में रचित शब्द हैं जिनमें नाम-साधना के रहस्य को सरस रूप में दिया गया है। राग सोरठि में श्री गुरु नानक देव जी के अन्तिम शब्द के सन्दर्भ में भक्त कबीर जी के शब्द का भाव स्पष्ट होता है—जिस मनुष्य के हृदय में सतिगुरु की ज्योति प्रज्वलित हो जाती है, उसके मन की चंचलता समाप्त हो जाती है। गुरु-उपदेश के प्रकाश से सारा अज्ञान मिट जाता है:

गुर साखी अंतरि जागी ॥ ता चंचल मति तिआगी ॥
गुर साखी का उजीआरा ॥ ता मिटिआ सगल अंध्यारा ॥ *(पन्ना ५९९)*

भक्त कबीर जी शब्द के प्रथम पद में बताते हैं कि पठन-पाठन का कोई लाभ नहीं जब तक कि पढ़ने-सुनने के परिणामस्वरूप प्रभु की प्राप्ति न हो:

किआ पड़ीऐ किआ गुनीऐ ॥ किआ बेद पुरानां सुनीऐ ॥
पड़े सुने किआ होई ॥ जउ सहज न मिलिओ सोई ॥ *(पन्ना ६५५)*

शब्द के द्वितीय पद में सहज साधना का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। अज्ञान के अंधेरे में दीपक की जरूरत होती है ताकि हृदय को हरि-नाम पदार्थ मिल सके जिस तक इंद्रियों की पहुंच नहीं होती। जिसको हरि-नाम मिल जाता है, उसके अंदर विवेक का दीपक जलता रहता है :

अंधिआरे दीपकु चहीऐ ॥ इक बसतु अगोचर लहीऐ ॥
बसतु अगोचर पाई ॥ घटि दीपकु रहिआ समाई ॥
(पन्ना ६५५-६५६)

भक्त नामदेव जी के शब्द में इसी शैली में प्रभु की ज्योति का वर्णन किया है—मेरे हृदय-कमल में हरि-नाम का रत्न है, वहां अब बिजली का प्रकाश है। अब प्रभु कहीं दूर नहीं दिखाई देता, निकट दिखता है। वह मेरे अंदर ही व्याप्त है:

रतन कमल कोठरी ॥ चमकार बीजुल तही ॥
नेरै नाही दूरि ॥ निज आतमै रहिआ भरपूरि ॥
(पन्ना ६५७)

भक्त रविदास जी प्रभु से अपना सम्बंध लोक जीवन के विविध आत्मीय परस्पर आश्रित रूपों से स्पष्ट करते हैं, हे माधव! अगर तुम दीपक हो तो मैं बत्ती बन जाऊंगा। यदि तुम तीर्थ बनो तो मैं यात्री बन जाऊंगा। अगर तुम सुन्दर पर्वत हो तो मैं मोर हूं। यदि तुम चन्द्रमा हो तो मैं चकोर हूं:

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ॥
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ॥ . . .
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती ॥
जउ तुम तीरथ तउ हम जाती ॥
(पन्ना ६५८-५९)

राग सोरठि में भक्त भीखन जी के दो शब्द हैं। प्रथम में वृद्धावस्था के रोग-निवारण हेतु हरि-नाम औषधि के सेवन का निर्देश है। दूसरे शब्द में हरि-नाम रत्न की प्राप्ति से तृप्त होने का वर्णन है। हरि-नाम से प्राप्त शीतलता से सभी-जगह प्रभु के दर्शन होते हैं:

कहु भीखन दुइ नैन संतोखे जह देखां तह सोई ॥
(पन्ना ६५९)

■

विस्मादी वृत्तांत-१४

सिरु धरि तली गली मेरी आउ

*-डॉ अमृत कौर**

वैशाखी का पावन पर्व सजा है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आह्वान पर हजारों सिख देश के कोने-कोने से आनन्दपुर साहिब के विशाल दीवान में सुसज्जित हैं। अपने गुरु के बुलावे पर संगतें हुम-हुमा कर पहुंची हैं। उनका उत्साह और उल्लास देखते बनता है। सभी बड़ी बेसब्री से गुरु जी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। क्या बात है, गुरु जी आ क्यों नहीं रहे? रागी-जन कीर्तन द्वारा संगतों को आनन्दित कर रहे हैं:

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

यह क्या ? श्री गुरु गोबिंद राय (सिंघ) नंगी तलवार को हवा में लहराते हुए पंडाल में प्रवेश करते हैं। सतेज मुख-आंखों में अद्भुत ज्योति, वीरता की साकार मूर्ति। शेर की तरह गर्जते हुये बोले, "साध संगत जी, मेरी तेग खून की प्यासी है। है कोई सिख जो अपना शीश कुर्बान करे?"

यह क्या? सभा में सन्नाटा छा गया। "हम तो गुरु-घर से मुरादें पूरी कराने आए हैं, बख्शिशें लेने आए हैं, यहां तो लेने के देने पड़ गए!" हजारों मुख निस्तेज हो गए। परन्तु इतने में भाई दया राम जी, लाहौर के खत्री उठे। शीश निवा कर बोले, "गुरु जी! मेरा शीश हाजिर है। जबसे तुम्हारा सिख सुसज्जित हुआ हूं, तब से यह शीश तुम्हारा हुआ है। मैं धन्य हुआ जो आप ने शीश मांग कर मुझे इस योग्य समझा।" गुरु जी उसे अपने साथ एक शामियाने में ले गए। फिर गुरु जी लहू से लथपथ तेग के साथ पंडाल में पहुंचे। लहू से सनी तेग को देख कर पंडाल में सन्नाटा छा गया--"लगता है गुरु जी के सिर पर चंडी सवार है। उनका भयानक रौद्र रूप देख कर तो डर लगता है।" गुरु जी—"मेरी तेग की प्यास अभी नहीं बुझी। मुझे एक और सिर की आवश्यकता है। है कोई दूसरा सिख जो अपना शीश कुर्बान करे?"

"यह क्या हो गया है? सिर क्या तेग की प्यास बुझाने के लिए होते हैं? चलो भाई चलो, नहीं तो गुरु जी एक-एक कर सबको तेग का ग्रास बना देंगे!"

इतने में भाई धर्म चन्द, यू. पी. के जाट उठे। हाथ जोड़ कर खड़े हो गए, "गुरु जी! मैं धन्य हुआ जो आपने मुझे इस योग्य समझा! यह सिर तो आपकी अमानत है। इस अमानत को आपको सौंप कर अपना जीवन सफल बनाना तो मेरा अहोभाग्य है।" गुरु जी उसे भी पीछे लगे शामियाने में ले गए। उन्होंने पुन: पंडाल में प्रवेश किया। लहू से लथपथ तेग से ताजा-ताजा लाल-लाल खून टपक रहा था।

तेग तो अभी भी रक्त की प्यासी थी। गुरु जी का चेहरा अभी भी उग्र रूप धारण

१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना (ज़ीरकपुर)

किए हुए था। सिंघ के समान हुंकारती हुई आवाज में बोले, "मेरी तेग की प्यास अभी भी नहीं बुझी। यह एक और सिर मांगती है।" और कुछ लोग मैदान छोड़ कर भाग निकले। "जैसे-कैसे जान तो बचाएं! यह हो क्या गया है?" इतने में हाथ जोड़ कर उठे भाई हिम्मद चंद जी, जगन्नाथपुरी (उड़ीसा) के झिउर, मस्तक निवा विनम्र स्वर में बोले, "धन्य भाग्य मेरा जो आपने मुझे इस लायक समझा! मेरा सिर आपकी तेग की प्यास बुझाने के लिए प्रस्तुत है।" गुरु जी उसे भी अन्दर ले गए। दीवान में भययुक्त सन्नाटा छा गया। कुछ और लोग खिसक गए। कुछ यह देखने के लिए बैठे रहे कि देखें क्या होता है। गुरु जी आए और फिर शीशदान का आह्वान किया। इस बार भाई मोहकम चन्द जी उठे, द्वारिका के छींबे। इस बार फिर लहू से सनी तेग के साथ गुरु जी लौटे और फिर शीश मांगा, "इस खड़ग की प्यास अभी नहीं बुझी, एक और सिर की जरूरत है।" यह सुनते ही बहुत से लोग जैसे पत्थर बन गए हों। लेकिन फिर हिलजुल हुई। अनेक लोग भाग निकले। परन्तु इतने में भाई साहिब चन्द जी, बिदर (कर्नाटक) के नाई उठे। हाथ जोड़ कर, मस्तक निवा कर बोले, "गुरु जी! मेरा शीश हाजिर है। इसे स्वीकार करके मेरा जीवन सफल बनाइए।" फिर वही नज़ारा दोहराया गया।

थोड़ा अन्तराल। लोगों की धीमी आवाज में बातें जारी हैं। लोग सांस रोके गुरु जी का इन्तजार कर रहे हैं कि अभी आए और अभी शीश मांगा। पर यह क्या? अरे यह तो पांचों के पांचों जीवित गुरु जी के साथ आ रहे हैं? आश्चर्यचकित लोगों की आंखें खुली की खुली रह गईं। नवीन केसरिया वस्त्र धारण किए, सतेज शान्त मुख, दिव्य ज्योति से आलोकित। गुरु जी भी शान्त और प्रसन्नचित हैं। उनका वह रौद्र रूप पता नहीं कहां तिरोहित हो गया है! अब तो बहुत लोग पछता रहे हैं। यदि हम भी शीश-दान के लिए उठ जाते तो कितना अच्छा होता! हम भी गुरु जी की कृपा के पात्र बनते!

गुरु जी ने एक बाटे में जल मंगवाया। 'अमृत-पान' का आयोजन शुरू हुआ। जलकुंडों के पुनीत जल से बाणी, कीर्तन-पाठ-गायन से 'अमृत' तैयार हुआ। इतने में गुरु-सुपत्नी माता जीतो जी, पवित्रता और प्यार की साकार प्रतिमा ने पंडाल में प्रवेश किया। उनके आगमन से सभी सिखों के शीश प्यार और श्रद्धा से झुक गए। वीरता के वातावरण में शान्ति और प्रेम ने प्रवेश किया। माता जी ने आकर कुछ बताशे अमृत में डाल दिए जिसका गुरु जी ने स्वागत किया और कहा, "मेरे खालसे को वीरता में मिठास की भी जरूरत है। दया और शान्ति का मिश्रण भी आवश्यक है। मेरे खालसे ने युद्ध में भी मन के समतोल को कायम रखना है। यह मीठे बताशे मेरे खालसे में मिठास का संचार करेंगे।"

गुरु जी ने पांचों को अमृत-पान कराया और कहा, "आज से तुम 'सिंघ' बने। पांच ककार धारण करने से तुम्हारा स्वरूप 'सिंघ' का बनेगा। मुझे प्रसन्नता है कि मेरे सिखों में से पांच सिख शीश-दान के लिए निकल आए। तुम सिर हथेली पर रख कर मेरी गली में आए हो। आज से यह सिर तुम्हारा नहीं, देश-कौम का है। गुलामी की जंजीरों को तोड़ना तुम्हारा कर्त्तव्य है। देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ मिटना तुम्हारे जीवन का ध्येय और लक्ष्य होगा। तुम सब विभिन्न जातियों, प्रांतों और धर्मों के हो, परन्तु तुम सब ने बिना भेदभाव

के एक बाटे से अमृत-पान किया है। आज से तुम्हारा धर्म होगा इंसानियत, मानवता, मनुष्यता। तुम सब उस परम पिता की सन्तान हो। तुम सबका पिता एक है, अत: तुम सब भाई-भाई हुए। कोई छोटा या बड़ा, ऊंच या नीच नहीं। तुम विभिन्न प्रांतों के होते हुए भी केवल देश के बेटे हो। तुम सब ने प्रान्तीयता, जातीयता, धर्म के भेदभाव को भूल कर पूर्ण एकता के एक सूत्र में बंधना है। राष्ट्रीय एकता स्थापित करना आज से तुम्हारा प्रथम कर्त्तव्य होगा। भारत मां की स्वतन्त्रता के लिए अपने जीवन का बलिदान देना तुम्हारे जीवन का लक्ष्य होगा। जिस निडरता से अपने प्राण-दान करने का तुम सबने संकल्प किया है, इस पर मुझे गर्व है। आज से तुम्हारे और मेरे में कोई भेद नहीं। पंच परमेश्वर होता है। अब तुम मुझे भी अमृत-पान का अभयदान हो।"

पांच प्यारों के साथ संगत भी विस्मय विभूत हो गई—"कैसा गुरु है जो हाथ जोड़ कर शिष्य बना पांच प्यारों से अमृत की दात मांग रहा है? लगता है यह भी गुरु जी का कोई कौतुक है। वे तो गुरु जी के सिख हैं: भला वे गुरु को अमृत-पान कैसे करा सकते हैं? वे उनके बराबर कैसे हो सकते हैं? वे उनके गुरु कैसे बन सकते हैं? गुरु तो गुरु ही रहेगा।"

परन्तु गुरु जी ने तो उन्हें उच्च आसन देकर उनका आत्म-सम्मान जागृत करना था, उनको प्रजातन्त्र का सच्चा पाठ पढ़ाना था, उनको बल प्रदान करना था, शक्तिशाली बनाना था, गीदड़ों से शेर बनाना था। गुरु जी ने बड़े प्यार और सत्कार से उन्हें कहा, "बिल्कुल संकोच मत करो। आज के बाद तुम्हारे और मेरे में कोई अन्तर नहीं रहेगा। तुम्हारा और मेरा स्वरूप एक होगा। मैं तुम में निवास करूंगा और तुम मुझ में:

खालसा मेरो रूप है खास ॥
खालसे मै हउ करों निवास ॥"

पांच प्यारों ने गुरु जी को अमृत-पान कराया। गुरु जी गुरु गोबिंद राय से गुरु गोबिंद सिंघ बन गए। यह दृश्य देखकर सम्पूर्ण वातावरण में उल्लास और प्रसन्नता का संचार हो गया। 'सति श्री अकाल' के जयकारों से वातावरण गूंज उठा। संगतें प्रसन्नता से झूम उठीं—*"वाहु वाहु गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥'* नागाड़ों से आकाश गूंज उठा। चारों ओर आनन्द और उल्लास का प्रसार हो गया। हजारों सिख अमृत-पान कर सिंघ सज गए, जिन्होंने गुरु जी के उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने प्राण न्यौछावर करने के दृढ़ संकल्प को *"सिरु धरि तली गली मेरी आउ"* के महावाक्य के अनुसार दोहराया। ■

जापु साहिब की विचार व्याख्या

(पृष्ठ ५५ का शेष)

गुरदेव उस ईश्वर के विविध रूपों को नमस्कार करते हुए फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरु! तुझे नमस्कार है। तुझे संसार के सभी जीव पूजते हैं। तू समस्त पदार्थों का खजाना है। हे देवों के देव अर्थात् सब देवताओं के देवता! तुझे नमस्कार है। तेरा कोई विशेष पहरावा नहीं तथा तेरा कोई भेद नहीं पा सकता, यथा:

महादेव को कहत सदा सिव ॥
निरंकार का चीनत नहि भिव ॥ (चोपई पा: १०)
नमो काल काले ॥ नमो सरब पाले ॥
नमो सरब गउणे ॥ नमो सरब भउणे ॥४५॥

हे वाहिगुरु! तुझे नमस्कार है। तू मौत को भी नष्ट कर देने वाला है अर्थात् तू काल का भी काल है। तू सबका पालनहारा है। तेरी सब जग, सब जीवों तक पहुंच है। तू सब भवनों में मौजूद है। तू सर्वत्र में व्याप्त है। ■

दशमेश पिता के बावन दरबारी कवि-८

गुरु-शोभा के गायक : कवि हंस राम जी

*-डॉ राजेंद्र सिंघ**

दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों की साहित्यिक उपलब्धियां अनागिनत हैं। इनमें से एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य पुरातन संस्कृत काव्य का जन-भाषा में अनुवाद था। रामायण, महाभारत, उपनिषद् आदि महान ग्रंथ गुरु-दरबार के कवियों द्वारा ब्रज-भाषा में पुनर्लिखित किये गये। कवि हंस राम जी ऐसे ही एक उत्कृष्ट कवि थे जो महाभारत के 'कर्ण-पर्व' का ब्रज-भाषा में अनुवाद करके विख्यात हो गये।

कवि हंस राम जी के आत्म-साक्ष्य के अनुसार उन्होंने यह कार्य मास मार्गशीर्ष, कृष्ण पक्ष द्वितीय, दिवस-मंगलवार, संवत् १७५२ विक्रमी अर्थात् नवंबर १६९५ ई को आरंभ किया:

संबत सत्रां सै बरस, बावन बीतनहार।
मारग वदि तिथि दूज को, तां दिन मंगलवार।
हंस राम तां दिन करयो, करन परब आरंभ।

कवि का कहना है कि गुरु दशम पिता जी की आज्ञा से उन्होंने यह कार्य आरंभ किया और इसके पारिश्रमिक के रूप में उन्हें साठ हजार रुपये प्राप्त हुए:

प्रिथम क्रिपा कर राख कर, गुरु गोबिंद उदार।
टका करे बखसीस तब, मो को साठ हजार।
तां को आयस पायकै, करण परव मैं कीन।
भाखा आरथ विचित्र कर, सुने सुकवि परबीन।

कवि हंस राम जी यहां यह भी स्पष्ट कर रहे हैं कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उदारता दिखाते हुए उन्हें राजाश्रय प्रदान किया और धन-धान्य से मालामाल कर दिया।

कवि हंस राम जी के विषय में एक प्रसंग मिलता है जिससे लगता है कि ये हिमाचल प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र के किसी गांव के रहने वाले थे। १७०४ ई के आनंदपुर साहिब युद्ध से पहले ही गुरु साहिब ने कवि हंस राम को खूब धन-दौलत, हाथी-घोड़े, लश्कर देकर विदा किया था। कवि के दल-बल को देख कर पहाड़ी राजा घबरा गये थे कि गुरु जी की फौज हमला करने आ रही है। ऐसे में कवि हंस राम जी ने यह कबित्त लिख कर उस स्थिति का वर्णन किया है कि मेरे दुंदभि-बाजे-गाजे, हाथी-घोड़े, सेना देखकर राजा शंका-ग्रस्त हो गये तो मैंने उन्हें कहा कि मैं श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का कवि चला जा रहा हूं-

दुंदुभि धुंकारे बाजे, मानो जलधर राजे,
राजत निषान भय, भान छिपे जात है।
हाथिन के हलका, हजारन गने के हय,
जटत जवाहर जो, जग मग गात है।
कोर साजे जोर कर, नालब को शोर सुने,
संकत सुरेश औ, नरेश बिलखात है।
हंस राम कहत, बिराजो जिन भाजो,
गुरु गोबिंद के मांगे, कविराज चले जात है।

उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकारों से सजी सुंदर ब्रज भाषा में दोहे, कबित्त, सवय्ये रचने वाले कवि हंस राम जी का विषय मुख्यत: दशम पिता की प्रशस्ति या स्तुति ही रहा है। कवि 'कर्ण-

(शेष पृष्ठ ६८ पर)

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना।*

कैलेंडर विकासक्रम का शिखर
सिख पंथ का नानकशाही कैलेंडर

*-सिमरजीत सिंघ**

समय को मापने की हर समय मनुष्य के मन में इच्छा रही है। समय सदैव चलता रहता है। समय एक ऐसी गाड़ी है, जिसका रुकने के लिए कोई स्टेशन नहीं है। मनुष्य ने समय को मापने के नाना प्रकार के यंत्र ईजाद किये, जिनके साथ निरंतर अपनी गति पर गतिमान समय को योजनाबद्ध ढंग से श्रृंखलाबद्ध किया गया और सैकिंडों, मिण्टों, घण्टों, मासों, वर्षों, सदियों एवं दहसदियों आदि में दर्शाया गया। सरकारों ने लोगों की इच्छा को संमुख रखते हुए कई बड़े-बड़े शहरों में घण्टा घरों के विशाल भवनों का निर्माण कराया।

पुरातन वक्तों में जब आज की तरह कैलेंडर न होते थे और न ही समय को दर्शाने के लिए कोई अन्य साधन होता था उन दिनों में भी लोग दिन, मास या फिर वर्ष का हिसाब किसी न किसी ढंग से रखते थे ताकि काम-काज समय पर हो सके जैसे आज भी कई पछड़े उपक्षेत्रों के लोग भूमि पर डक्के के साथ या अंगुलियों के साथ और दीवार पर कोयले के साथ लकीरें खींचकर या निशान लगा कर या फिर रस्सी को गांठें देकर गणना करते हैं। इसी प्रकार ही प्राचीन काल में भी लोग किसी न किसी प्रकार से दिन तथा तिथियां स्मरण रखते थे। लगभग २००० वर्ष पूर्व यूरोप के शिकारी लोग दिन तथा तिथियां स्मरण रखने हेतु उस समय में निर्धारित हुए दिन, महीने तथा वर्ष के आधार पर हड्डियों या लकड़ियों पर प्रतिदिन देखनेयोग्य एक निशानी लगाते थे। समय के साथ-साथ कैलेंडर अस्तित्व में आया और इसने कई रूप बदले। पहले कैलेंडरों को पत्थरों के शिलालेखों पर मुद्रित किया गया। फिर चमड़े तथा वृक्षों की छालों और दीवारों पर उकरा जाता रहा। समय के व्यतीत होने के साथ-साथ जैसे-जैसे छापाखाना अस्तित्व में आया तो यह लेंडर कागज पर मुद्रित होना प्रारंभ हो गया।

'कैलेंडर' शब्द ग्रीक भाषा के शब्द 'कैलंड' से अस्तित्व में आया है, जिसका अर्थ होता है, चीखना अर्थात जब पहले-पहले ग्रीक (युनान) के कर्मचारी निर्धारित दिनों के बाद चीख-चीख कर सरकारी टेक्स वसूलने के लिए हुक्म जारी करते थे तो उस समय को वहां के लोग 'मुंथ' कहा करते थे जो धीरे-धीरे 'मंथ' (महीना) कहा जाने लगा।

ऐतिहासकारों के अनुसार ५०० वर्ष पूर्व टिगारस फिरात (इराक) के लोगों ने एक ऐसा कैलेंडर बनाया था जिसमें एक महीना ३० दिन का था परंतु दिन-रात मिला कर एक दिन में मात्र १२ घण्टे ही थे और एक घण्टे में ३० मिण्ट होते थे भाव आज के २ घण्टे का समय उस समय के १ घण्टे के समान था। कुछ ऐतिहासकारों के अनुसार मिसर में प्रत्येक वर्ष ३६५ दिनों के पश्चात जब लुबधक सितारा सूर्य के समीप दिखाई देता था, तब मिसर की नील नदी में एक बार बाढ़ आती थी, के आधार पर ४२३६ ईसा पूर्व पूरब मिसर में ३६५ दिनों के

**संपादक, गुरमति प्रकाश/गुरमति ज्ञान।*

वर्ष का प्रथम कैलेंडर तैयार किया गया था।

ऐतिहासकारों के अनुसार २००० ईसा पूर्व बेबोलोनिया (इराक) में चंद्रमा की गतिविधियों के आधार पर ३५४ दिनों को एक वर्ष मानते थे। इसमें एक मास तो २९ दिनों का होता था परंतु दूसरा मास ३० दिनों का होता था। इसी प्रकार ही रोमन साम्राज्य के अनुसार २९५ दिनों का एक वर्ष माना गया था जिसमें एक महीना २९ दिनों का और दूसरा महीना ३० दिनों का होता था भाव १० महीने के वर्ष का कैलेंडर बनाया गया था। परंतु सूर्य की, पृथवी द्वारा की जाती परिक्रमा में ३६५ दिनों से भी अधिक का समय लगता है जिसके आधार पर रोमन साम्राज्य में एक वर्ष में और दो महीने बना दिये गए, इस प्रकार वर्ष में कुल ३५४ दिन हो गए भाव ५९ दिन अन्य जुड़ गए। इस तरह उपर्युक्त बातों से स्पष्ट होता है कि सदियां ही नहीं बल्कि दहसदियों पूर्व भी लोगों में दिन, महीने तथा वर्ष का हिसाब-किताब रखने की प्रवृति विद्यमान थी।

आज का कैलेंडर यदि दुनियां में सर्वाधिक बढ़ कर माना जाता है, उसको गरगेरियन कैलेंडर कहते हैं। इस कैलेंडर को बनाने के लिए लगभग २००० वर्ष पूर्व जूलीयस सीज़र ने खगोलशास्त्री सोसिजीनस के साथ विचार-विमर्श करने के बाद काफी खोज करने के उपरांत यह निष्कर्ष निकाला कि सूर्य को पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिए ३६५ दिन ६ घण्टे का समय लगता है। इसके आधार पर उसने ३६५ दिनों वाला एक कैलेंडर तैयार किया, जिसको बाद में सारी दुनिया ने अपना लिया और इस कैलेंडर को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिली। सूर्य के इर्द-गिर्द पृथ्वी की परिक्रमा के आधार पर प्रत्येक चार वर्ष के बाद आने वाले वर्ष में २४ अन्य घण्टे जोड़कर इसको ३६६ दिनों का कर दिया गया है। गरगेरियन कैलेंडर बनाते वक्त यह निश्चित किया गया था कि वर्ष में १२ मास होंगे और वर्ष का पहला मास जनवरी होगा और वर्ष का अंतिम मास दिसंबर का होगा। उन वक्तों में मासों के दिनों की गणना इतनी नहीं थी रखी गई जितनी आज है। उन दिनों में फरवरी के २९ दिन होते थे और लीप के वर्ष में ३० दिन होते थे। आगस्ट सीज़र को यह बात अच्छी नहीं लगी, उसने फरवरी के मास में से एक दिन कम कर दिया और एक दिन को जुलाई-अगस्त के भीतर जोड़ दिया जिस से जुलाई और अगस्त मास के दिनों की गणना समरूप हो गई। जूलियस सीजर की ओर से बनाये गए कैलेंडर में कई बार सुधार किये गए। सन् १५८२ ई में पोप गरगेरी १३वें ने भी इस में काफी महत्वपूर्ण सुधार किये जिस कारण इसका नाम गरगेरियन कैलेंडर पड़ गया। इस कैलेंडर में १२ मास जनवरी से लेकर दिसंबर तक होते हैं। जनवरी, मार्च, मई, जुलाई, अगस्त, अकतूबर और दिसंबर के मास ३१-३१ दिनों के होते हैं। अप्रैल, जून, सितंबर, नवंबर ३०-३० दिनों के निश्चित किये गए हैं। फरवरी का मास २८ दिनों का होता है परंतु प्रत्येक चौथे वर्ष यह मास २९ दिनों का होता है और इस वर्ष को लीप (छलांग) का वर्ष कहा जाता है।

सन् १५८२ ई में इटली और फ्रांस ने भी गरगेरियन कैलेंडर अपना लिया। आज विश्व के सभी देशों ने इसको अपना लिया है और इसके हिसाब से ही हिसाब-किताब रख रहे हैं। परंतु यह भी बात निश्चित है कि धर्मों वाले इस कैलेंडर को नहीं मनाते और वे अपने कैलेंडरों के अनुसार ही अपने दिन एवं त्योहार मनाते

हैं। ईसाई लोग गरगेरियन कैलेंडर के हिसाब से अपने त्योहार मनाते हैं।

हिंदु धर्म में सूर्य और चंद्रमा दोनों के आधार पर कैलेंडर तैयार किया जाता है। इस में भी गरगेरियन कैलेंडर की तरह १२ मास होते हैं और इनका प्रथम मास चैत्र से प्रारंभ होता है। सभी हिंदु त्योहार इसी कैलेंडर के आधार पर मनाये जाते हैं। शक संवत वाला कैलेंडर शालिवाहन राजा ने चलाया। यह कैलेंडर ईस्वी सन् से लगभग ७८ वर्ष पश्चात प्रारंभ किया गया था। शालिवाहन भारत के दक्षिण का एक प्रतापी राजा हुआ है, जो विक्रमादित्य राजा का बैरी था। शालिवाहन की राजधानी गोदावरी के किनारे प्रतिशहान थी, जो अब नजाम के राज्य में औरंगाबाद के जिले पैथान नाम से प्रसिद्ध है। पुराने ग्रंथों में इसका नाम ब्रह्मपुरी भी आया है। शालिवाहन ने पंजाब को जीत कर शालिवहन कोट (स्यालकोट) शहर बसाया। इसके बलंद, रसालू, पूरन, सुंदर और लेख आदि १६ पुत्र थे। इसकी मृत्यु कारूर के युद्ध में हुई थी। इसका नाम कई ग्रंथों में सतवाहन भी लिखा है।

विक्रमी संवत् वाले कैलेंडर के बारे में कहा जाता है कि यह कैलेंडर विक्रमादित्य नाम के राजा ने अपने नाम पर प्रारंभ किया था। इतिहास में 'विक्रमादित्य' नाम के कई राजा हुए हैं। इन प्रतापी राजाओं में सब से प्रसिद्ध गर्दभिल राजा का पुत्र उजैन का राजा था, जिसने अपने नाम पर 'संवत्' ईस्वी सन् से ५७ वर्ष पूर्व प्रारंभ किया। यह राजा स्वयं बड़ा पंडित एवं विद्वान होने के कारण अच्छे विद्वानों की कद्र करने वाला था।

विक्रमादित्य ने शक जाति को भारी पराजय दी थी, जिससे उसका नाम संस्कृत ग्रंथों में 'शिकारी' प्रसिद्ध है। शालिवाहन के साथ विक्रमादित्य की परस्पर कठोर शत्रुता थी। कई विद्वानों का ख्याल है कि विक्रमी संवत् महाराजा कनिष्क ने चलाया था, जिसको विक्रमादित्य की उपाधि प्राप्त थी। बहुत संख्या में लेखक मानते हैं कि यशोधर नाम के विक्रमादित्य ने विक्रमी वर्ष चलाया था। कई विद्वानों का कहना है कि गौतमी पुत्र ने शकों को अपने विक्रम (बल) के साथ जब पराज्य दी तो उस समय से विक्रमी संवत् प्रारंभ किया गया।

मुस्लिम धर्म में चंद्रमा के आधार पर कैलेंडर तैयार किया जाता है और इसी आधार पर दिन-त्योहार मनाये जाते हैं। इनका प्रथम मास मुहरम का होता है। चंद्रमा के कम होने/बढ़ने के कारण इसके मास गरगेरियन कैलेंडर के हिसाब से नहीं पड़ते। इसके मास हर वर्ष कम होते या बढ़ते रहते हैं। इनके इस कैलेंडर का प्रारंभ ६२२ ई में तब हुआ जब मुस्लिम पैगंबर हजरत मुहम्मद साहिब मक्का छोड़कर मदीना चले गए थे। हजरत मुहम्मद साहिब ने लोगों को बुतप्रस्ती से हटने का उपदेश किया जिस कारण मक्के में उनका विरोध प्रारंभ हो गया था और वे मक्का छोड़कर मदीना चले गए थे। मुहम्मद साहिब के मक्के से हिजर (बिछुड़ना) का जो समय था, वह इस्लाम की तारीख में प्रारंभिक वर्ष गणन किया गया है।

बौद्ध धर्म में कैलेंडर संवत् प्रारंभ होने से पूर्व ११० ई में हुआ। बौद्ध धर्म के मानने वालों ने अपना अलग कैलेंडर प्रारंभ कर लिया था। भारत में चाहे इसका प्रचलन नहीं है परंतु श्री लंका, बर्मा, थाईलेंड आदि देशों में जहां बौद्ध धर्म को मानने वाले काफी संख्या में हैं, वहां यह कैलेंडर आज भी प्रचलित है।

भारतीय राष्ट्रीय कैलेंडर जो कि देसी

महीनों के नाम पर प्रचलित है, में १२ मास चैत्र, वैसाख, ज्येष्ट, आषाड़, सावन, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीष, पौष, माघ तथा फाल्गुण होते हैं। इसमें चंद्रमा की विभिन्न स्थितियों के अनुसार दिन बनाये गए हैं, जैसे प्रथम, दूज, तीज, चौथ और पंचमी आदि। पूर्ण चंद्रमा वाले दिन को पूर्णिमा कहा जाता है। अमावस के बाद चंद्रमा के प्रकाश में वृद्धि होने लगती है, इन दिनों को उज्जवल पक्ष कहा जाता है। पूर्णिमा के पश्चात कम होते प्रकाश वाले दिनों को कृष्ण पक्ष या अंधकार पक्ष कहा जाता है।

सिख धर्म में नानकशाही कैलेंडर श्री गुरु नानक देव जी के प्रकाश से प्रारंभ होता है। प्राचीन ऐतिहासकारों और ज्योतिषियों ने नानकशाही संवत का प्रारंभ १५२६ विक्रमी के अनुसार १४६९ ई से निश्चित करके मासों के दिन, गणना, तारीखें और थितें विक्रमी कैलेंडर वाली ही अपनाई हुई हैं। भारत में प्रचलित सूरजी और चंद्रमा कैलेंडरों में कई प्रकार की त्रुटियां हैं। विशेष रूप से चंद्रमा के अनुसार निश्चित किये गुरुपर्व वर्ष के ३६५ दिनों में किसी पक्की तारीख पर आने के बजाय आगे-पीछे होते रहते हैं। इसके कई कारण हैं। चंद्रमा कैलेंडर में हर महीना पूर्णिमा से प्रारंभ होता है या अमावस से अमावस तक चलता है। इस प्रकार चंद्रमा के अनुसार पूरा वर्ष ३५४ दिनों का होता है जो कि सौर्य वर्ष से ११ दिन कम है। चंद्र वर्ष को सौर्य वर्ष से मिलाये रखने के लिए पण्डित हरेक तीसरे या चौथे वर्ष चंद्रमा वर्ष के मासों की संख्या १२ की बजाय १३ कर देते हैं। इस प्रकार कई बार चंद्रमा वर्ष में एक ही नाम के दो-दो महीने होते हैं। इस नये जोड़ या अतिरिक्त मास को लौंद का मास कहा जाता है। इस मास को अशुभ मानते हुए इस मास में किसी भी प्रकार का धार्मिक या सामाजिक दिवस नहीं मनाया जाता। फलस्वरूप चंद्रमा वर्ष के साथ मनाये जाने वाले त्योहार या ऐतिहासिक दिवस आगे-पीछे होते रहते हैं। फलस्वरूप श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का प्रकाश दिवस पौष सुदी ७ कई बार सांझे वर्ष में दो बार और कई बार सर्वथ ही नहीं आता। अत: यह अत्यंत आवश्यक है कि सिख इतिहास में सही तारीखें कैलेंडर अनुसार सदैव स्थिर रहें, यह निश्चित कर ली जाएं। अत: सिख पंथ के लिए एक आधुनिक तथा साइंटेफिक कैलेंडर का होना अति आवश्यक है। भारत में सूर्य के अनुसार चलने वाला विक्रमी कालेंडर का वर्ष मौसमी वर्ष नहीं है। समय के व्यतीत होने से इसके मास मौसमों से अलग हो जाएंगे। इसका मुख्य कारण विक्रमी वर्ष का मौसमी वर्ष से अंतर २६ सैकिंड अधिक होना है।

उपर्युक्त कारणों से जहां ३३०० वर्षों में सांझे मौसमी वर्ष से एक दिन का अंतर पड़ेगा, वहां विक्रमी कैलेंडर के अनुसार ७०-७१ वर्षों में एक दिन का अंतर पड़ जाएगा। यह अंतर विक्रमी कैलेंडर अनुसार आई या आने वाली वैसाखी की तारीकों से भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि गरगेरियन कैलेंडर के अनुसार १७५३ ई में वैसाखी ९ अप्रैल को, सन् १७९९ ई में १० अप्रैल को, सन् १८९९ ई में १२ अप्रैल को और सन् १९९९ ई में १४ अप्रैल को आई। यदि यह सिलसिला यूं ही चलता रहा तो वैसाखी सन् २१०० में १५ अप्रैल को और २१९९ ई में १६ अप्रैल को आयेगी। ११०० वर्ष के बाद यह वैसाखी मई में आया करेगी और १३००० वर्ष के बाद यह वैसाखी अकतूबर के मध्य में चली जाएगी।

इन सभी समस्याओं की ओर स. पाल सिंघ (पुरेवाल) ने पंजाब की युनिवर्सिटियों एवं कालेजों में कार्यरत सिख विद्वानों और शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का ध्यान दिलाया जिस पर विद्वानों के साथ परामर्श व विचार के बाद नया नानकशाही कैलेंडर वर्ष २००३ में अस्तित्व में आया। इस कैलेंडर के वर्ष का प्रथम मास गुरबाणी में वर्णित 'बारह माह' के अनुसार चैत्र और अंतिम मास फाल्गुण रखा गया। नानकशाही कैलेंडर के पहले पांच मास चैत्र, वैसाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, सावन के दिनों की गणना ३१-३१ रखी गई है। अन्य सात मास भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गषीष, पौष, माघ और फाल्गुण के दिनों की संख्या ३०-३० रखी गई है। लीप के वर्ष के दौराण नानकशाही वर्ष का अंतिम मास फाल्गुण ३१ दिनों का होता है।

नानकशाही कैलेंडर में विद्वानों ने इतिहास के अलग-अलग स्रोतों का अध्ययन करके गुरु साहिबान के गुरुपर्व तथा अन्य ऐतिहासिक तिथियों को पक्के तौर पर निश्चित कर दिया है। इन तारीखों को निश्चित करते समय अंगरेजी तारीखों को नहीं बल्कि देसी तारीखों को ही ध्यान में रखा गया है। उदाहरण के तौर पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का प्रकाश दिवस २३ पौष का है और सदैव २३ पौष को ही आया करेगा। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का स्थापना दिवस मार्गषीष की संक्रांति का था और भी यह मार्गषीष की संक्रांति का ही है चाहे संक्रांति उन दिनों में १५ नवंबर की थी, आज यह १४ नवंबर की होती है। इसी प्रकार शिरोमणि अकाली दल का स्थापना दिवस ३० मार्गषीष का है और अब यह नानकशाही कैलेंडर अनुसार हरेक वर्ष ३० मार्गषीष का ही आया करेगा न कि अंगरेजी तारीखों के अनुसार। ■

गुरु-शोभा के गायक : कवि हंस राम जी

(पृष्ठ ६३ का शेष)

पर्व' का अनुवाद आरंभ करते ही श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और आनंदपुर साहिब की स्तुति करते हैं:

कौन बडो या जगत मे, को दाता को सूर?
कांके रन अरु दान मे, मुख पर बरसत नूर?
रचयो ब्रहम कर अपने, दीनो भू को भार।
सो तो गुरु गोबिंद है, नानक को औतार।
ऐसे काहूं के नही, सुर सुरपति के भौन।
ईस मुनीस दिलीस ए, नर नरेस के कौन?
चार बरन चारों जहां, आश्रम करत अनंद।
ता को नाम अनंद पुर, है अनंद को कंद।

इस प्रकार गुरु-कार्य संपूर्ण कर कवि हंस राम जी गुरु-कृपा के रूप में असंख्य धन-धान्य प्राप्त करके पर्वतीय क्षेत्र में स्थित अपने गांव लौट गये। अनेक उपमाएं देकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की प्रशंसा करते हुए कवि हंस राम जी कहते हैं:

जौले शिव सलिता सु, कवि हंस राम कहै,
जौले राम रावन, को रामायन चाहबी।
जौले ध्रुव धराने, तरुन तेज राजै जग,
तौले श्री गोबिंद सिंघ, तेरे सिर साहबी।

अर्थात जैसे शिव के शीश पर गंगा, रामायण में राम, धरती पर ध्रुव, नक्षत्र और संसार भर में सूर्य का प्रकाश विराजता है, सुशोभित होता है, वैसे ही श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के सिर पर पातशाही सजती है। ■